Con. 4. VIII.9.49
320

अंक 8
संख्या 9

बृहस्पतिवार,
26 मई
सन् 1949 ई.

सत्यमेव जयते

भारतीय संविधान-सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट

अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में-(*जारी*)........ 489-549

भारतीय संविधान-सभा

बृहस्पतिवार, 26 मई सन् 1949 ई.

भारतीय विधान-परिषद् कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रात: 8 बजे अध्यक्ष (माननीय डा. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

अल्पसंख्यकों पर रिपोर्ट—*जारी*

***श्री आर. के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अल्पसंख्यक समिति की जो बैठक सन् 1947 में हुई थी और जो बैठक 11 मई सन् 1949 में हुई है, इन दोनों में कितना अन्तर है! दृष्टिकोण में क्या आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया है। कल लोग यहां पूछ रहे थे कि सन् 1947 के बाद आखिर क्या बात हुई है जिससे समिति ने अपनी राय बदल दी? माननीय सदस्यों को मैं बता दूं कि यह बात नहीं है कि पहली बैठक में बहुसंख्यक सदस्य स्थान सम्बन्धी किसी आरक्षण के विरुद्ध नहीं थे बहुत से लोग अवश्य ही चन्द लोगों को छोड़कर—तब भी पृथक् निर्वाचन और स्थान सम्बन्धी आरक्षण को बिल्कुल उठा देने के ही पक्ष में थे, किन्तु हमारे नेताओं ने ऐसा महसूस किया है कि अगर अपनी स्वतंत्रता का श्रीगणेश होते ही हम इस रफ्तार से चलना शुरू करेंगे तो हमारी स्थिति को लोग गलत समझ बैठेंगे और शायद लोग यह कहें कि बहुसंख्यक वर्ग अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर कुठाराघात कर रहे हैं। इसलिये उन लोगों की यह राय हुई कि पृथक् निर्वाचन की पद्धति को उठाकर हम अच्छा प्रारंभ कर रहे हैं और इस योजना पर अमल करते हुए हमें अल्पसंख्यकों को एक मौका देना चाहिये। हम में से कुछ लोग इस राय से सहमत नहीं थे और हमने इस प्रश्न पर सभा का मत लिया कि स्थान सम्बन्धी आरक्षण उठा दिया जाये। पर हमारे समर्थकों की संख्या बहुत कम थी और हमें दूसरे पक्ष की राय स्वीकार करनी पड़ी।

पर अब इस बीच में क्या हो गया? कल ही यह पूछा गया था कि पहली वाली स्कीम को प्रयोगार्थ हम क्रियान्वित क्यों नहीं कर रहे हैं? पर उसके क्रियान्वित करने के पहले देश में एक बहुत बड़ी बात हो गई। साम्प्रदायिक उपद्रवों ने देश में एक विभीषिका खड़ी कर दी। जो कुछ हुआ मैं उसे यहां कहना नहीं चाहता। सभा के प्रत्येक सदस्य को मालूम है कि क्या हुआ? साम्प्रदायिक उपद्रवों के कारण गत वर्ष हमें अपनी संसद में इस आशय का एक प्रस्ताव पास करना पड़ा कि कोई भी साम्प्रदायिक संगठन, जिसका उद्देश्य है राजनीतिक अधिकारों और विशेषाधिकारों की प्राप्ति, उसे संसद कोई मान्यता न देगी। इस प्रस्ताव को पास हुए तेरह महीने बीत चुके और मेरी राय में हमें इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में अर्सा पहले अपनी राय बदलनी चाहिये थी, पर हमारा नेतृवर्ग यह चाहता था कि साम्प्रदायिक उत्तेजना शान्त हो जाये तो कुछ किया जाये। ईश्वर को धन्यवाद है

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री आर.के. सिधवा]

कि विधान निर्माण का काम कुछ अर्से के लिये बढ़ गया। अगर ऐसा न होता तो मैं आपको बताऊं कि स्थान सम्बन्धी आरक्षण का जो प्रावधान विधान में रहता, वह विधान के लिये एक कलंक ही होता। अस्तु, परमात्मा को धन्यवाद है कि स्वयं प्रकृति ने विधान-निर्माण के काम को कुछ अर्सा के लिये टाल दिया और इस बीच में यह बात सिद्ध हो गई, आरक्षण की व्यवस्था अवश्य ही उठ जानी चाहिये।

अब जब हम देख रहे हैं कि साम्प्रदायिक संघर्ष के कारण इतनी बड़ी बर्बादी हो चुकी है, तो मैं नहीं समझ पाता कि कुछ लोग अभी भी साम्प्रदायिक परित्राण (सेफगार्डस) क्यों चाहते हैं। अब भला क्यों साम्प्रदायिक परित्राण दिया जा सकता है? अंग्रेज लोग जब यहां थे तक साम्प्रदायिक परित्राण की जरूरत थी ताकि वह लोग अपना खेल खेल सकें। किन्तु अब अंग्रेज चले गये हैं, सुतरां किसी के अधिकारों के लिए परित्राण की कोई जरूरत नहीं रह गई है। आज प्राय: पचास वर्षों से हमारी यही अभिलाषा रही है कि यह बुराई, जिसने कि देश में इतनी बड़ी बर्बादी पैदा की, जो हमारे राजनैतिक शरीर में एक नासूर और जहर वाद की तरह जहरीला असर पैदा करती रही है, किसी तरह खत्म की जाये। आज का दिन एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण दिन है और जब हमारा विधान अमल में आयेगा, तो संसार की दूसरी जातियां इस बात के लिये हमें गौरव से याद करेंगी कि हमारे विधान में साम्प्रदायिकता को कोई स्थान नहीं दिया गया है और हमारा राज्य वास्तविक अर्थ में एक ऐहिक राज्य है।

मेरे मा. मित्र मुहम्मद इस्माइल ने कल बहस-मुबाहिसे के दौरान में यह कहा था कि बिना पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था हुए मुसलमान इन्साफ न पा सकेंगे और उन्हें वह प्रतिनिधित्व न प्राप्त हो सकेगा जो वह चाहते हैं। अगर मेरे माननीय मित्र श्री मुहम्मद इस्माइल अब भी द्विराष्ट्रीय सिद्धान्त में और साम्प्रदायिकता में विश्वास रखते हैं, तो अवश्य ही उनके लिये यहां कोई स्थान नहीं है। परन्तु श्री लारी सरीखे अनेक व्यक्ति भी मौजूद हैं जो अपने सहधर्मियों को यह कहकर फटकारते हैं कि "इस समय भी द्विराष्ट्रीय सिद्धांत का और पृथक् निर्वाचन का राग अलाप रहे हैं? अब बराय मिहरबानी इन सब बातों को भूल जाइये"। श्री लारी के अन्य और विचार चाहे जो कुछ भी हों, पर मैं उन्हें यकीन दिला सकता हूं कि श्री लारी सरीखे मुसलमानों को बहुसंख्यक वर्ग का विश्वास सदा प्राप्त रहेगा। पर श्री मुहम्मद इस्माइल जैसे व्यक्तियों को यह विश्वास न मिलेगा और यह आश्चर्य की बात न होगी कि यह निर्वाचन में न आ पाये। बम्बई के म्युनिसिपल निर्वाचन में, जहां संयुक्त निर्वाचक हैं, बहुत से मुस्लिम उम्मीदवार, बहुसंख्यक वर्ग का समर्थन पाकर चुने गये हैं। अगर बहुसंख्यक सम्प्रदाय से मुस्लिम उम्मीदवारों को समर्थन न किया होता, तो कांग्रेस द्वारा खड़े किये गये ये उम्मीदवार कभी न चुने गये होते। यह तो एक उदाहरण के रूप में मैंने आपको बताया है। डा. मुखर्जी ने अपने निजी अनुभव के आधार पर यह कहा था कि बहुसंख्यक संप्रदाय अतीत काल में सदा ही उदार रहा है, अपने ही संप्रदाय के सम्बन्ध में मैं कहता हूं कि ऐसा एक भी उदाहरण नहीं है कि हमने किसी खास राजनैतिक अधिकार या रियायत की मांग की हो। हम तो खुद अपने पांव पर खड़े हैं और कोई कृपा नहीं चाहते हैं, पर बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने स्वत: अपनी प्रेरणा से हमारे

कार्य का सदा ख्याल रखा है। श्री लारी ने अपनी सुन्दर वक्तृता के सिलसिले में यह कहा कि बहुसंख्यक संप्रदाय को उदार और न्यायसंगत रहना चाहिये और डा. मुखर्जी ने बतलाया कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय सदा उदार और न्यायसंगत रहा है। अल्पसंख्यक वर्ग का एक सदस्य होने के नाते मैं निजी अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय वस्तुतः सदा उदार रहा है। कभी-कभी तो बहुसंख्यक सम्प्रदाय बहुत ही उदार रहा है और मेरे इस कथन में रंच-मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं है। अगर अल्पसंख्यक वर्ग समुचित व्यवहार करे तो उसे बहुसंख्यक सम्प्रदाय से डरने का कोई कारण नहीं है। अगर अल्पसंख्यकों की मांगें समुचित हैं तो मैं उन्हें विश्वास दिला सकता हूं कि मुसलमानों के चुने जाने में जरा भी कठिनाई न होगी। बहुसंख्यक वर्ग का वोट पाकर बहुसंख्यक मुसलमान चुनाव में जरूर आ जायेंगे।

श्री लारी ने अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली के लिये यहां वकालत की है। आप ने कहा है कि इस पद्धति से अल्पसंख्यकों के अधिकारों और हितों को संरक्षण मिल सकेगा और इस सम्बन्ध में आपने बेलज्यिम, स्विट्जरलैंड और इंग्लैंड के अल्पसंख्यकों की नजीर भी पेश की। मैं उनसे बिलकुल सहमत हूं कि अनुपाती प्रतिनिधित्व की पद्धति में अल्पसंख्यकों के हित समुचित रूप से संरक्षित रहते हैं। अपने कांग्रेस विधान में भी यही पद्धति रखी गई है। अखिल भारतीय कांग्रेस सदस्यों के चुनाव में प्रतिनिधि लोग यही पद्धति बरतते हैं। किन्तु यह मालूम होना चाहिये कि कांग्रेस के प्रतिनिधियों की संख्या, सभी प्रान्तों को मिलाकर, पांच सौ से ज्यादा नहीं होती, छोटी जमात के लिये यह पद्धति प्रयोग में लाई जा सकती है। इसके अलावा, जो लोग इस पद्धति से परिचित हैं वे जानते हैं कि अनुपाती प्रतिनिधित्व की पद्धति बड़ी पेचीदी होती है और समझदार व्यक्ति ही इसे समझ पाते हैं। श्री लारी इस पद्धति को प्रयोग में लाना चाहते हैं, ऐसे निर्वाचन में जहां निर्वाचकों की संख्या पचास हजार से एक लाख तक पहुंचेगी। बेलजियम और स्विट्जरलैंड की आबादी मुश्किल से कुछ लाख होगी। उनके निर्वाचन क्षेत्रों में मतदाताओं की संख्या कितनी नगण्य होगी यह हम खुद समझ सकते हैं। हमारे देश की जनसंख्या चालीस करोड़ है और हमारे निर्वाचन क्षेत्रों में मतदाता होंगे पचास हजार से एक लाख तक। ऐसी सूरत में हमारे यहां यह पद्धति सुचारू रूप से नहीं बरती जा सकती। विधान परिषद् कार्यालय से जो साहित्य इस सम्बन्ध में प्राप्त हुआ है, उससे पता चलता है कि एक देश में इस पद्धति का प्रयोग किया गया था, पर वहां भी लोगों को फिर बैलट बाक्स की पद्धति पर वापस आना पड़ा। आम चुनाव में यह पद्धति कभी सुचारू रूप से काम नहीं कर सकती।

मिस्टर इस्माइल और मि. पोकर ने, जिन्होंने कि प्रस्ताव का समर्थन किया है, पृथक् निर्वाचन के सम्बन्ध में बड़े प्रखर विचार व्यक्त किये हैं। मैं इन दोनों सज्जनों को यह बताना चाहता हूं कि परामर्शदातृ समिति हमेशा बदलती रही है। पहली मीटिंग में जबकि हमने प्रस्ताव पास किया था श्री खलीकुज्जमां ने, जो उसके एक सदस्य थे (वह मुस्लिम लीग के सदस्य भी थे) इसका समर्थन किया था। मिस्टर चुंद्रीगर भी परामर्शदातृ समिति के सदस्य थे पर ये दोनों सज्जन अब पाकिस्तान पहुंच गये हैं। इन दोनों सज्जनों ने प्रस्ताव का समर्थन किया था, पर द्विराष्ट्रीय सिद्धांत में विश्वास रखने के कारण दोनों ही पाकिस्तान चले गये। आप बहुसंख्यक वर्ग को इसके लिये कैसे दोषी कह सकते हैं कि उसने

[श्री आर.के. सिधवा]

एक निर्णय करके, जो कि सबको मान्य था, बाद में उसे बदल दिया? उनको दोषी बनाना तो एक आश्चर्यप्रद बात है। ये लोग अपने दिलों को टटोलें और अपनी अन्तरात्मा से पूछें कि प्रस्ताव में हाथ बटाकर, हम में से कइयों की इच्छा के विरुद्ध प्रस्ताव पास करा कर वे यहां से चले क्यों गये। संरक्षण के मैं बहुत खिलाफ था पर अपने नेताओं और अपने मुस्लिम मित्रों की मरजी के आगे हमें सर झुकाना पड़ा। मैंने कहा था कि इसका प्रयोग कर देखिये, आप खुद इसे शीघ्र ही त्याग देंगे। आज वह शुभ दिन हमारे विधान-निर्माण के इतिहास में आ गया है, जब हम अपना निर्णय बदल रहे हैं।

श्री सैयद मुहम्मद सादुल्ला ने कल यह कहा था कि डा. मुखर्जी को मुस्लिम सम्प्रदाय का यह कहकर उल्लेख न करना चाहिये था कि वे इसके विरुद्ध थे। मैं तो यह चाहता हूं कि श्री सादुल्ला साहब यह बात श्री मुहम्मद इस्माइल से कहते, जिनको अपने संशोधन में यह नहीं कहना चाहिये था कि अन्य अल्पसंख्यक सम्प्रदायों को पृथक् निर्वाचन मिलना चाहिये। आपका कहना है कि न केवल मुसलमानों को बल्कि अन्य अल्पसंख्यकों को भी पृथक् निर्वाचन की सहूलियत मिलनी चाहिये। अन्य अल्पसंख्यकों के सम्बन्ध में बोलने से उन्हें क्या प्रयोजन? अगर डा. मुखर्जी के लिये यह कहा जाता है कि उन्हें मुसलमानों का जिक्र करने से क्या प्रयोजन, तो मैं पूछता हूं मि. मुहम्मद इस्माइल फिर हमारे लिये यह क्यों कहते हैं कि हमें पृथक् निर्वाचन प्राप्त होना चाहिये, जबकि हमारा सम्प्रदाय पृथक् निर्वाचन के सर्वथा विरुद्ध है।

हमारे सामने जो योजना रखी गई है, वह ऐसी है जिसे हर व्यक्ति, चाहे वह किसी भी सम्प्रदाय का हो, खुशी से स्वीकार करना चाहिये और उसके लिये गौरव बोध करना चाहिये। हमें तो यह कहना चाहिये कि हमारा प्रस्तुत प्रस्ताव, जिसके द्वारा हम अपने पूर्व निर्णय को बदल रहे हैं, जिसने देश में इतनी बड़ी बर्बादी पैदा की, वह हर व्यक्ति को शान्ति और सद्भावना के सन्निकट लाकर विश्व के इतिहास में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण काम करने जा रहा है। इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मिस्टर लारी और मि. मुहम्मद इस्माइल के संशोधनों का मैं विरोध करता हूं। श्री मुहम्मद इस्माइल के संशोधन में ज्यादा कहने की जरूरत नहीं है, क्योंकि यह एक ऐसे जमाने के लिये है जो कि गुजर चुका है। अत: इसके खिलाफ बोलकर मैं सभा का समय नहीं बर्बाद करना चाहता।

हां, श्री लारी के संशोधन पर ध्यान देना जरूरी है। उन्होंने बड़े ही सुन्दर ढंग से अपना पक्ष प्रतिपादन किया है। अनुपाती प्रतिनिधित्व की पद्धति पर और सामूहिक मतदान की व्यवस्था के अनुसार, जैसा कि श्री लारी का सुझाव है, मैंने निर्वाचन क्षेत्रों को बनाने की कोशिश की है। मुसलमानों की बड़ी आबादी संयुक्त प्रान्त में है। वहां उनकी संख्या 14 प्रतिशत बैठती है। सामूहिक मतदान की पद्धति से आखिर श्री लारी को या उनके सम्प्रदाय को किस तरह समुचित प्रतिनिधान प्राप्त हो सकता है? दुनिया में ऐसा कोई देश नहीं है, जहां यह पद्धति अमल में हो। उदाहरण के लिये आप गोरखपुर को ले लीजिये।

वहां की कुल आबादी 23 लाख है और नई संसद की लोक सभा के लिये यहां तीन जगहें होंगी। वहां मुसलमानों की आबादी दो लाख है और श्री लारी के संशोधन के मुताबिक वहां के मुस्लिम मतदाता अपने सब वोट एक उम्मीदवार के लिये इकट्ठा कर सकते हैं। वहां दो लाख की आबादी में एक लाख मुस्लिम वोटर होंगे और वे अपने कुल तीन लाख वोट एक उम्मीदवार को इकट्ठा दे सकते हैं, पर फिर भी उनका उम्मीदवार सफल नहीं हो सकता है, क्योंकि बाकी 21 लाख की आबादी में प्राय: 11 लाख वोटर होंगे और वे अपने 33 लाख वोट तीन उम्मीदवारों को इकट्ठा देंगे। और फिर एक वोटर को तीन वोट हों और वह अपने तीनों वोट एक ही उम्मीदवारों को दे, यह बात भी बड़ी अलोकतंत्रीय है और ऐसा दुनिया के किसी देश में नहीं होता है। और फिर इस पद्धति से वह उद्देश्य भी नहीं सिद्ध हो सकता है जो श्री लारी के मस्तिष्क में है। इस तरह की सामूहिक मत पद्धति सर्वथा अलोकतंत्रीय है और अवैज्ञानिक है। इससे एक व्यक्ति को अपने सभी मत एक उम्मीदवार के पक्ष में देने का अधिकार तो जरूर मिलता है, पर फिर भी इससे उस उद्देश्य की सिद्धि नहीं हो पाती जो श्री लारी के दिमाग में है। मिस्टर लारी की यह भी ख्वाहिश थी कि अनुपाती प्रतिनिधित्व की पद्धति को यहां परीक्षणार्थ प्रयोग में लाया जाये। मैं खुद भी इस पद्धति में विश्वास रखता हूं। इससे हर वर्ग को समुचित प्रतिनिधान मिल जाता है। किन्तु अगर हम इस समय अपने देश में इस पद्धति को चालू करते हैं, तो हमारे मार्ग में अनेक कठिनाइयां खड़ी हो जायेंगी। इस पद्धति को समुचित रूप से कार्यान्वित करने के लिये यह जरूरी है कि निर्वाचक समूह शिक्षित हो, क्योंकि मतदाता को इसमें यह सोचना पड़ेगा कि उम्मीदवारों में अपने मत की प्राथमिकता का क्रम वह किस प्रकार रखे। अशिक्षित व्यक्ति प्राथमिकता के महत्त्व को अच्छी तरह समझ ही नहीं सकते। उनको यह व्यक्त करना होगा कि वह पहली प्राथमिकता किसे देते हैं और दूसरी और तीसरी किसे देते हैं। छोटे-मोटे चुनावों में भी, जहां कि विधान परिषद् के सदस्यों को इस पद्धति के आधार पर मतदान करना पड़ा है, यह देखा गया है कि अधिकतर सदस्य इसे अच्छी तरह नहीं समझ पाये हैं। केवल चतुर और विशेषज्ञ ही यह समझ सकते हैं कि इस पद्धति के हिसाब से कैसे वोट दिये जाते हैं। आयरलैंड और स्विटजरलैंड में, जहां कि यह पद्धति बरती जाती है, मतदाता वर्ग बड़ा ही शिक्षित है और फिर वहां किसी भी निर्वाचन क्षेत्र में बीस-बाइस हजार से ज्यादा मतदाता नहीं हैं। आयरलैंड में एक निर्वाचन क्षेत्र में अधिक से अधिक बीस हजार वोटर हैं और स्विट्जरलैंड में बाइस हजातर वोटर हैं। अब फ़र्ज कीजिये, आप अपने देश में यह पद्धति बरतते हैं। आप जानते हैं कि इसका क्या नतीजा होगा? संयुक्त प्रान्त में कुल आबादी करीब 500 लाख हैं और लोक सभा के लिये, आबादी के आधार पर दस मुसलमान चुने जायेंगे। अगर अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति के अधीन सभी मुस्लिम वोटर अपनी पहली प्राथमिकता समान संख्या में चुने हुए दस उम्मीदवारों को दें और समूचा प्रान्त एक निर्वाचन क्षेत्र हो, तभी दसों उम्मीदवार चुने जा सकते हैं। पर 500 लाख की आबादी रखने वाला सारा का सारा प्रान्त आखिर एक निर्वाचन क्षेत्र तो बनाया नहीं जा सकता। ज्यादा से ज्यादा यह किया जा सकता है कि प्रान्त को दस निर्वाचन क्षेत्रों में विभक्त कर दिया जाये, अगर श्री लारी के प्रयोजन को सिद्ध करना है। उस सूरत में प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में पचास लाख की आबादी होगी और प्रत्येक में समान संख्यक मुस्लिम आबादी होनी चाहिये जो कि सर्वथा असम्भव है।

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

अगर हम अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या दस से ज्यादा नहीं बढ़ाते हैं और प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के सभी मुस्लिम वोटर अपनी पहली राय किसी एक खास मुस्लिम उम्मीदवार को देते हैं, तभी दसों उम्मीदवार चुने जा सकते हैं बशर्ते कि हर निर्वाचन क्षेत्र में मुस्लिम आबादी समान हो, पर सब जगह उनकी समान आबादी हो ही नहीं सकती। श्री लारी ने जो हल निकाला है वह ऐसा हल है जो अमल में नहीं लाया जा सकता। और फिर इस तरह के निर्वाचन क्षेत्र बनाने में और तरह-तरह की नई जटिलतायें उत्पन्न होंगी और आप इस आधार पर निर्वाचन क्षेत्रों की रचना कर ही नहीं सकते। इसके अलावा इस पद्धति पर चलने में मतदान की गोपनीयता जाती रहेगी। अशिक्षित लोग मतदान पत्र पर यह नहीं व्यक्त कर सकते कि वे अपनी प्राथमिकता किस क्रम से दे रहे हैं, इसलिये किसी दूसरे आदमी के द्वारा मतपत्र भरवाने होंगे और इससे मतदान की गोपनीयता जाती रहेगी। इसलिये मेरा ख्याल है कि अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली दूसरे छोटे-मोटे देशों के लिये चाहे कितनी भी अच्छी क्यों न सिद्ध हुई हो, पर इससे हमारे मुल्क में वांछित प्रयोजन नहीं सिद्ध हो सकता है और इस देश के लिये तो यह पद्धति बिल्कुल अव्यवहार्य है। मिस्टर लारी हमारे जिला गोरखपुर से ही आये हैं जहां की आबादी देश-विभाजन के पहले कल चालीस लाख थी जिसमें सिर्फ चार लाख मुसलमान थे। अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली से वहां के कुल दो लाख मुस्लिम वोट मिस्टर लारी को मिलेंगे। पर अगर इस तरह सभी मुसलमान उन्हीं को अपना वोट देते हैं तो दूसरे उनको अपना वोट न देंगे। उस सूरत में लोगों की स्वाभाविक प्रवृत्ति यही होगी और साम्प्रदायिकता इस तरह जरूर अपना असर दिखाने लगेगी। फिर तो मि. लारी चुने न जा सकेंगे। इसलिये मेरा ख्याल है कि इस पद्धति से हम जो चाहते हैं वह पूरा नहीं हो सकता है। इससे तो साम्प्रदायिक भावना ही बढ़ेगी जिसे हम अपनी इस प्रस्तावित व्यवस्था द्वारा बिल्कुल खत्म कर देना चाहते हैं।

इसलिये मैं कहूंगा कि आज का दिन हिन्दुस्तान की तारीख में एक महत्त्वपूर्ण दिन है और जो निर्णय हम कर रहे हैं वह भी एक ऐतिहासिक निर्णय है। आज 48 वर्षों के संग्राम के बाद हम पृथक् निर्वाचन पद्धति को समाप्त करने में सफल हुए हैं। आशा है कि अब से देश का समूचा वातावरण बदल जायेगा। बहुसंख्यक संप्रदाय अब इस बात के लिये धर्मबद्ध होता है कि अधिक से अधिक मुस्लिम देशभक्तों को चुनकर वह अपनी सच्चाई का सबूत दे। मुझे तो इस बात का पक्का विश्वास है कि अब और ज्यादा मुसलमान चुने जायेंगे, अगर जनता की सेवा-भावना लेकर वह आगे आयें और सच्चाई और निष्ठा के साथ देश एवं देशवासियों की सेवा के लिये प्रस्तुत हों।

कल मिस्टर लारी ने यहां यह बताया था कि संयुक्त प्रान्त में सोशलिस्ट 11 जगहों के लिये चुनाव लड़े और उनको 30 प्रतिशत वोट मिले। मेरा ख्याल है कि ये आंकड़े गलत हैं पर हम मान लेते हैं कि ये सही हैं। इस हालत में जिस व्यवस्था का प्रस्ताव आपने रखा है उसके अधीन अगर ग्यारह निर्वाचन क्षेत्रों को चार निर्वाचन क्षेत्रों में बदल दें और प्रत्येक से चार प्रतिनिधि लिये जायें तो सोशलिस्टों को सफल होने का मौका मिल

सकता था। गोरखपुर में निर्वाचन क्षेत्र की आबादी 7 लाख थी। इसलिये अगर चार निर्वाचन क्षेत्रों को मिलाकर अनेक सदस्यात्मक एक निर्वाचन क्षेत्र बना दिया जाये तो उसकी आबादी हो जायेगी 28 लाख के करीब। इतना बड़ा निर्वाचन क्षेत्र तो आवश्यकता से अधिक बड़ा हो जायेगा और उसका प्रबंध करना कठिन होगा। क्योंकि प्रत्येक में मतदाताओं की संख्या 15 लाख तक पहुंच जायेगी। इतने बड़े निर्वाचन क्षेत्र से तो फिर धनकुबेर और सम्पन्न व्यक्ति ही चुनाव लड़ सकते हैं और साधारण व्यक्ति कभी वहां से चुना ही न जा सकेगा। उसके अलावा सोशलिस्टों को जो वोट मिले थे वह सब के सब उनके कार्यक्रम को देखकर थोड़े ही दिये गये थे। हर मतदाता जो कांग्रेस से नाराज थे उसने अपना वोट सोशलिस्ट को दे दिया। अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली में आप ऐसे नतीजे की आशा नहीं कर सकते।

इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर मैं माननीय सरदार पटेल को बधाई देता हूं कि एक या दो स्थानों को छोड़कर अन्य सर्वत्र स्थान सम्बन्धी आरक्षण की व्यवस्था को समाप्त करके आपने अपनी कीर्तिपताका को और भी गौरवान्वित बना दिया है। इस सम्बन्ध में आपकी जो रिपोर्ट है उससे हमारे देश की इतिहास धारा ही बदल जायेगी। अल्पसंख्यकों ने इस व्यवस्था को स्वीकार कर लिया है और उनका कहना है कि वे स्थान सम्बन्धी आरक्षण नहीं चाहते हैं। मैं तो यही आशा करता हूं कि दस वर्ष के अन्दर हमारे हरिजन बन्धु भी इस स्थिति में आ जायेंगे। कि समयानुकूल दिशा को अपना लेंगे और आरक्षण सम्बन्धी अधिकार को वे स्वतः छोड़ देंगे। ऐसा होने पर हर व्यक्ति को बिना किसी जाति या धर्म भेद के समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जायेगा। उस समय लोगों को वोट मिलेंगे सेवा, योग्यता और गुण के आधार पर और हमारी प्राचीन दासता के सभी नियम उस समय समाप्त हो चुके होंगे।

***सरदार हुकुम सिंह** (पूर्वी पंजाब : सिख): अध्यक्ष महोदय, सभा के सामने इस समय जो प्रस्ताव उपस्थित है, मैं उसका हृदय से समर्थन करता हूं। इसके समर्थन के सिलसिले में मुझे चन्द बातें कहनी हैं धर्म के आधार पर जो लोग अल्पसंख्यक माने जाते हैं उनके लिये जो भी आरक्षण हैं वह सब इस प्रस्ताव द्वारा समाप्त करने की कोशिश की जा रही है। यह एक सर्वसम्मत बात है कि देशवासियों के प्रत्येक वर्ग को इसका जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त है, चाहे वह वर्ग संख्या की दृष्टि से या राजनैतिक दृष्टि से अल्पसंख्यक ही क्यों न हो, कि उसे समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त रहना चाहिये तथा देश के शासन में उसका समुचित हाथ रहना चाहिये। इस अधिकार को कोई अस्वीकार नहीं कर सकता और फिर हमारे ऐहिक राज्य में तो इस पर कोई प्रश्न ही नहीं किया जा सकता। फिर विवाद रह जाता है केवल समुचित प्रतिनिधित्व पाने की प्रणाली के सम्बन्ध में। इस सम्बन्ध में हमने एक पद्धति का परीक्षणार्थ प्रयोग किया है और वह पद्धति है पृथक् निर्वाचन और एक निश्चित अनुपात के हिसाब से प्रतिनिधान का दिया जाना। हमने एक लम्बे अरसे तक इस प्रणाली का प्रयोग करके इसकी परीक्षा की है। अवश्य ही इस सम्बन्ध में हममें यह मतभेद हो सकता है कि आया हमें जो भी दिक्कतें उठानी पड़ी हैं उनका मूल कारण यह पृथक् निर्वाचन प्रणाली ही थी या और किन्हीं बातों के कारण हमें इन सब दिक्कतों का शिकार होना पड़ा है। पर इस बात को सभी मंजूर करते हैं कि पृथक् निर्वाचन प्रणाली

[सरदार हुकुम सिंह]

ने विभिन्न संप्रदायों के बीच एक खाई जरूर खड़ी कर दी। हमने इस पद्धति को अरसे तक प्रयोग करके देख लिया है और अब हम एक जाति के रूप में—सुसम्बद्ध जाति के रूप में—जीवित रहना चाहते हैं। इसके लिये वांछनीय है कि हम अन्य कसी प्रणाली को अपनायें। इस सम्बन्ध में एक प्रणाली का सुझाव श्री लारी ने दिया है और उनकी प्रणाली है सामूहिक मतदान की प्रणाली। यह उपाय भी अच्छा ही है। इससे अल्पसंख्यकों और विभिन्न हितों—सबको—ही समुचित प्रतिनिधित्व मिल सकेगा। पर इसे अपनाने में एक कठिनाई मैं यह महसूस करता हूं कि हमारे जैसे विशाल देश में जहां 90 प्रतिशत जनता अशिक्षित है, यह प्रणाली सुचारू रूप से अभी कार्यान्वित न की जा सकेगी। इसको अपनाने में मुझे केवल यही एक कठिनाई नजर आ रही है अन्यथा मैं इसका सहर्ष स्वागत करता। अल्पसंख्यक-परामर्शदातृ समिति ने यह महसूस किया कि स्थान सम्बन्धी आरक्षण की व्यवस्था से साम्प्रदायिकता को प्रश्रय मिलेगा जिससे विभिन्न सम्प्रदायों में पार्थक्य बना रहेगा। इसलिये उन्होंने अपनी रिपोर्ट में यह राय दी है कि हर तरह का आरक्षण समाप्त कर देना चाहिये। निश्चय ही यह एक बहुत ही लम्बी छलांग थी कि पृथक् निर्वाचन से, जिसके कि हम अरसा से आदी थे, एकाएक हम संयुक्त निर्वाचन पर आ गये। इसीलिये एक बीच का रास्ता अपनाने के ख्याल से आरक्षण की बात पहले रखी गई थी। पर अब हममें से प्रत्येक व्यक्ति यही अनुभव करता है कि हमें एक सुसम्बद्ध जाति के रूप में बढ़ना चाहिये, भिन्न-भिन्न फिरकों में अब हमें न विभक्त रहना चाहिये और पार्थक्य की हर बात को हमें अब खत्म कर देना चाहिये। मेरी राय में अगर हम इस पद्धति को एक मौका दें, जिसे दस वर्षों के लिये अमल में लाने का यहां सुझाव दिया गया है, तो उसमें कोई नुकसान नहीं है। अगर हम यह देखते हैं कि यह पद्धति ठीक तरह से काम कर रही है, अगर अल्पसंख्यक लोगों को इस बात का संतोष है कि उनके अधिकार सुरक्षित हैं तो और किसी संरक्षण की फिर आगे मांग न होगी। पर अगर उनको यह महसूस होता है कि उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया गया है और उनके विरुद्ध कुछ भेदभाव बरता गया है तो अवश्य ही अल्पसंख्यक लोग और किसी पद्धति को अपनाने के लिये जोरदार आवाज उठायेंगे और तब उनका पक्ष और भी मजबूत रहेगा। इसलिये मेरा ख्याल तो यही है कि हमें इस नवीन व्यवस्था को, कि अल्पसंख्यकों को कोई आरक्षण नहीं दिया जायेगा, एक खास मौका देना चाहिये। हम में से हर व्यक्ति यही महसूस करता है कि राष्ट्र को एक सुसम्बद्ध जाति के रूप में विकसित देखने के लिये हमें यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये और मैं इस बात का यकीन दिलाना चाहता हूं कि सिख लोग इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये यथाशक्ति प्रयास करने को तैयार हैं और यही कारण है कि वे इस प्रस्ताव का पूर्णतः समर्थन कर रहे हैं।

मैं यह कहूंगा कि इस प्रस्ताव को स्वीकार करके अल्पसंख्यकों ने बहुसंख्यक सम्प्रदाय को एक कड़ी परीक्षा में डाल रखा है। अब उन पर इस बात की जबरदस्त जिम्मेदारी आयत हो गई है कि वह यह देखें कि अल्पसंख्यक अपने अधिकारों को पूर्णतः सुरक्षित महसूस करते हैं। जहां तक मैं देख पाता हूं, अल्पसंख्यकों की सुरक्षा इसी में है कि हमारा राज्य ऐहिक हो। वास्तविक अर्थ में राष्ट्रीयतावादी होना अल्पसंख्यकों के लिये लाभप्रद है। बल्कि मैं तो यह कहता हूं कि यह अल्पसंख्यक ही हैं जो राष्ट्रीयता को अगर गलत

रूप दिया गया तो उसके खिलाफ वह जंग करेंगे। हमें जरूरत है शुद्ध असली राष्ट्रीयता की, नकली की नहीं। बहुसंख्यक सम्प्रदाय को इस बात का गर्व नहीं करना चाहिये कि उनका दृष्टिकोण राष्ट्रीय है। अपनी विशेष सुविधाजनक स्थिति के कारण ही वह राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपना चुके हैं। कुछ ऐसी बात नहीं है कि उन्होंने यह दृष्टिकोण अपनी मर्जी से अपनाया हो। उनको चाहिये कि वे अपने को अल्पसंख्यकों की स्थिति में रख कर उनकी आशंकाओं को समझने की कोशिश करें। संरक्षण की सारी मांगें और ये जो संशोधन यहां रखे गये हैं वह सभी उस आशंका के फलस्वरूप हैं जो कि अल्पसंख्यकों के मन में हैं। मैं यह भी कहूंगा कि सिखों को भी अपनी भाषा, लिपि तथा सेवाओं के सम्बन्ध में जरूर भय है। उनकी आशंकाओं को हमारी सरकार दूर कर सकती है। सरकार को यह देखना चाहिये कि उनकी आशंका दूर हो और हर सम्प्रदाय की संस्कृति को विकास पाने का पूरा मौका मिले। कई बातों को—परामर्शदातृ समिति की रिपोर्ट में यही कहा गया है—हम रूढ़ि के लिये छोड़ सकते हैं यह ठीक ही होगा। विधान के मसौदे में इन सब बातों का कोई उल्लेख नहीं होना चाहिये। व्यक्तिगत रूप से तो मैं इस बात के पक्ष में हूं कि अल्पसंख्यकों के सरक्षण के सम्बन्ध में जो अध्याय विधान में रखा गया है वह सारा का सारा हटा दिया जाये। मैंने इस आशय के एक संशोधन की अरसा पहले सूचना भी दी थी। इस सम्बन्ध में कुछ रूढ़ियां जरूर ही विकसित होनी चाहियें और बहुसंख्यक सम्प्रदाय का यह कर्त्तव्य है कि इसका प्रयास करे कि कुछ हितकर रूढ़ियां चलन में आ जायें जिससे कि इस अन्तर्वर्त्ती काल में अल्पसंख्यक अपने को सुरक्षित महसूस करें।

प्रस्तुत प्रस्ताव के दूसरे हिस्से में यह कहा गया है कि सिखों की चार जातियां अनुसूचित जातियों में शामिल कर ली जायें। माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल ने इस सम्बन्ध में सभा से यह अनुरोध किया है कि सिखों को जो रियायत दी जा रही हैं उससे बुरा न मानें और नाराज न हों। आपने यह भी कहा था और बड़ी स्पष्टवादिता के साथ कहा था कि "धर्म का सहारा लेकर लोग अपने राजनैतिक उद्देश्यों को सिद्ध करना चाहते हैं।" फिर भी आपने सभा से यह आग्रह जरूर किया कि वह सिखों के मनोभावों के प्रति सहानुभूति रखें, क्योंकि कई कारणों को लेकर उन्हें बड़ी ही क्षति उठानी पड़ी है। इन सब रियायतों के लिये और सहानुभूति व्यवहार के लिये निश्चय ही सिख लोग सरदार पटेल के, परामर्शदातृ समिति के एवं इस सभा के कृतज्ञ हैं। पर मैं अपने कर्त्तव्य पालन में चूकूंगा, अगर मैं यह न बता दूं कि इस प्रश्न विशेष पर मेरा दृष्टिकोण कुछ दूसरा ही है। यहां हमसे यह कहा गया है कि सिख धर्म जाति-पाति का कोई भेदभाव नहीं मानता है और यह कि कतिपय राजनैतिक अधिकारों को पाने के लिये हमने अपने धर्म सम्बन्धी कई सिद्धांतों को कुर्बान कर दिया। किन्तु इस सम्बन्ध में मैं अन्यथा सोचता हूं क्योंकि जब हम यह कहते हैं कि वह सभी संरक्षण जो कि उन अल्पसंख्यकों को दिये जाते हैं जो कि धर्म के आधार पर अल्पसंख्यक माने जाते हैं, अब बन्द हो जाने चाहियें, तो फिर इसका स्वाभाविक परिणाम यह होगा ही। अगर हम कुछ रियायतें, विशेष सुविधायें या अधिकार अनुसूचित जातियों को देते हैं और केवल इस आधार पर देते हैं वे सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुये हैं और इसलिये नहीं कि वे धर्म के आधार पर अल्पसंख्यक हैं तो दूसरी श्रेणियों के ऐसे लोगों को भी चाहे, उनका धर्म कुछ भी हो, जो सामाजिक

[सरदार हुकुम सिंह]

आर्थिक और राजनैतिक दृष्टि से उसी तरह पिछड़े हुये हैं, आपको इस सूची में शामिल करना होगा। इसलिये मेरा कहना तो यह है कि यह बात अरसा पहले ही हो जानी चाहिये थी कि इन लोगों को भी, जो कि पिछड़े हुए हैं हमें अनुसूचित जातियों में शामिल कर लेना था। हमें इस रियायत के रूप में न समझना चाहिये।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): इसके लिये दोषी ठहराइये सरदार उज्जल सिंह को।

***सरदार हुकुम सिंहः** अस्तु, इन सब बातों के बावजूद भी सिख लोग इसके लिये बहुत कृतज्ञ हैं। अगर यह रियायत है तो भी सिख इसके लिये कृतज्ञ हैं। और वे इसके अधिकारी हैं, अगर इसलिये यह उन्हें दिया जा रहा है तो भी वे इसके लिये कृतज्ञ हैं। हम ऐसा महसूस करते हैं कि हमारी एक ऐसी मांग, जिसके लिये हम बहुत चिन्तित थे, अब पूरी कर दी गई है। सिख यह आशा करते हैं कि उनकी अन्य छोटी-मोटी मांगों पर भी अनुकूल ढंग पर विचार किया जायेगा ताकि उन्हें संतोष हो और वे देश की प्रगतिशील शक्तियों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर राष्ट्र के वांछित लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकें।

***श्री मुहम्मद इस्माइल खां** (संयुक्त प्रान्त : मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, परामर्शदातृ समिति ने इस सम्बन्ध में अपने पहले के निर्णय को बदलकर अब जो दूसरा निर्णय किया है, मैं उसका हृदय से समर्थन करता हूं। इस नये निश्चय से स्थान सम्बन्धी आरक्षण की समाप्ति हो जाती है, जिससे कोई कारगर संरक्षण तो मिलता नहीं था और केवल साम्प्रदायिकता को ही जीवित रखने में मदद मिलती थी। बहुसंख्यक संप्रदाय के मतदाताओं की संख्या इतनी ज्यादा है कि अगर वह चाहते तो बिना किसी दिक्कत के अपने मतलब को सिद्धि के लिये इस उपाय का प्रयोग करके अपनी मरजी के लोगों को ही चुन सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। मैं उनको मुबारकबाद देता हूं कि उन्होंने अपने लाभ के लिये इस उपाय को प्रयोग में लाना ठीक नहीं समझा।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, माननीय सदस्य की वक्तृता हम साफ-साफ नहीं सुन पाते हैं। उनकी आवाज ठीक-ठीक सुनाई ही नहीं दे रही है।

***श्री मोहम्मद इस्माइल खांः** सभा के वाद-विवाद में, श्रीमान्, मैं शायद ही कभी भाग लेता हूं और शायद यही वजह है कि माइक्रोफोन पर बोलने की सही आदत मैं नहीं अख्तियार कर पाया हूं और मेरी आवाज इस पर ठीक नहीं बैठ रही है। अस्तु, मुझे खुशी है कि यह फैसला किया गया है और मैं इसका स्वागत करता हूं। मैं इसका अभिनन्दन इसीलिये कर रहा हूं कि स्थान सम्बन्धी सरंक्षण से केवल साम्प्रदायिकता को ही प्रश्रय मिल पाता और इससे मुसलमानों या अन्य अल्पसंख्यकों को कोई वास्तविक संरक्षण नहीं मिल पाता। बहुसंख्यक संप्रदाय को मैं धन्यवाद देता हूं कि उसने अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये इस व्यवस्था का उपयोग करके अपने जबरदस्त बहुमत से कोई लाभ नहीं उठाया। कुछ

दिनों से मुसलमान यह सोच रहे थे कि यह आरक्षण की व्यवस्था एक दायित्वपूर्ण शासन-व्यवस्था के लिये बिल्कुल बेमेल चीज है। मैं कहूंगा कि जब यहां प्रान्तों में प्रान्तीय स्वायत्त शासन की व्यवस्था पहले पहल चालू की गई, तो फौरन ही मुसलमानों को यह महसूस होने लगा कि पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था उनकी हित-रक्षा के लिये कोई प्रभावकर संरक्षण नहीं बन सकती है। उन्हें उसी समय यह एहसास नहीं हुआ बल्कि उसके बहुत पूर्व भी उन्हें इसका यकीन नहीं था कि इस व्यवस्था से उनको पर्याप्त संरक्षण प्राप्त हो सकेगा। मैं समझता हूं कि सभा को इस बात की याद दिलाई जा सकती है कि जब मिस्टर जिन्ना ने अपनी 14 शर्तें रखी थीं तो उन्होंने यह भी सोच रखा था कि उनके द्वारा मांगे हुए कतिपय संरक्षण अगर स्वीकार कर लिये जाते हैं, तो भविष्य में जो चुनाव होंगे वह संयुक्त निर्वाचन के आधार पर ही होंगे। कुछ अरसा से मुसलमान यह सोचने लगे हैं कि दायित्वपूर्ण शासन व्यवस्था के चालू हो जाने पर पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था अब असामयिक हो गई है। मद्रास से आये हुए अपने माननीय मित्र को, जो पृथक् निर्वाचन पर इतना आग्रह कर रहे हैं, मैं यह बताना चाहता हूं कि जिन परिस्थितियों और अवस्थाओं के कारण इस व्यवस्था को जन्म दिया गया था, अब वह नहीं रह गई है। उस समय जबकि पृथक् निर्वाचन की मांग की गई थी, विधान सभाओं के लिये चुनाव सीधे जनता द्वारा नहीं होता था। उस समय विधान सभाओं के लिये जो लोग चुने जाते थे उनको म्युनिसिपल या जिला-बोर्ड के सदस्य चुनते थे। संरक्षण के लिये कोई वैधानिक व्यवस्था नहीं थी। उस समय एक विदेशी हुकूमत का बोलबाला था और उसका अपना सरकारी दल विधान सभाओं में सदस्य के रूप में था और उस समय अपने प्रयोजन की सिद्धि के लिये मुसलमान पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था का उपयोग कर सकते थे। पर जैसा कि मैंने अभी अभी कहा है, प्रान्तों में स्वायत्त शासन के चालू होते ही मुसलमानों को इसका एहसास हो गया कि पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था से उनके हितों का संरक्षण नहीं हो सकता और उन्हें हमेशा के लिये विरोधी पक्ष में ही रहना होगा और इस ख्याल से उनको बड़ी ही निराशा हुई। मेरे आदरणीय मित्र श्री मुहम्मद सादुल्ला ने फरमाया है कि स्थान सम्बन्धी आरक्षण की व्यवस्था एक मात्र बेगम ऐजाज रसूल की राय से ही हटाई गई है। इस संबंध में मैं उनको याद दिलाऊंगा कि आज से दस बारह महीने पहले एक मीटिंग हुई थी, जिसमें विधान-परिषद् के बहुतेरे मुसलमान सदस्यों ने भाग लिया था और उसमें यह फैसला हुआ था कि आरक्षण सम्बन्धी व्यवस्था को हटाने के लिये कोई कार्रवाई की जानी चाहिये। इसलिये यह कहना सही नहीं है कि एकमात्र बेगम ऐजाज रसूल के वोट से ही यह निर्णय किया गया है। बेगम ऐजाज रसूल ने जो मत दिया था, वह उनका केवल अपना मत नहीं था बल्कि उन सब लोगों का था, जिन्होंने कि उस मीटिंग में भाग लिया था। मैं यह नहीं कहता हूं कि श्री सैयद सादुल्ला भी उस मत से सहमत थे, पर दस या बारह सदस्य जरूर वहां थे जिन्होंने इसका समर्थन किया था कि आरक्षण सम्बन्धी व्यवस्था को उठाने के लिये कोई कार्रवाई की जानी चाहिये।

अब मैं अपने उन मित्रों को जो अपने अधिकारों के संरक्षणार्थ पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था पर इतना आग्रह कर रहे हैं, यह बताना चाहता हूं कि हमारे वर्तमान विधान में मौलिक अधिकारों को न्याय स्वरूप दिया गया है। भविष्य में अपने अधिकारों के लिये हम विधानसभा में नहीं लड़ेंगे बल्कि सर्वोच्च न्यायालय में अपील कर इनको मान्य करायेंगे

[श्री मोहम्मद इस्माइल खां]

और हमारे दृष्टिकोण से सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इसका फैसला कराना हमारे लिये अधिक हितकर होगा। विधान सभाओं में तो दलबन्दी की भावना इतनी प्रबल रही है कि ऐसे प्रश्नों पर सर्वथा तटस्थ होकर शायद ही कभी कोई विचार किया जा सके। पर जबकि विधान में ही इस संरक्षण की व्यवस्था कर दी गई है, तो हमारे लिये डरने की कोई बात नहीं है। हमारी जो सांस्कृतिक, धार्मिक अथवा शैक्षणिक संस्थायें होंगी, वह सदा इस बात का ध्यान रखेंगी कि हमारे अधिकारों पर कहीं अतिक्रमण नहीं हो रहा है, उनको कम नहीं किया जा रहा है और आवश्यक होने पर वह इसकी रक्षा सर्वोच्च न्यायालय में अपील करके करेंगी। भविष्य में मैं विश्वास करता हूं कि मुस्लिम सदस्य भी अपने निर्वाचन क्षेत्रों की ओर से उसी तरह अधिकारपूर्वक बोल सकेंगे जैसा कि अन्य सदस्य बोलते हैं। इसीलिये मैं इस साम्प्रदायिकता को उठा देना चाहता हूं जो पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था के रूप में मौजूद है ताकि विधान सभाओं में आने पर मुस्लिम सदस्य भी वैसे ही अधिकारपूर्वक बोल सकें जैसा कि अन्य सदस्य बोलते हैं और वे न केवल मुसलमानों के प्रतिनिधि की हैसियत से बोलें बल्कि अपने निर्वाचन क्षेत्र के सभी निर्वाचकों की ओर से बोल सकें। पृथक् निर्वाचन के आधार पर चुने गये प्रतिनिधियों में और प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र के आधार पर आये प्रतिनिधियों में कोई सामन्जस्य नहीं हो सकता है। आप इन दोनों के बीच की कोई व्यवस्था नहीं रख सकते। साम्प्रदायिक अधिकारों के संरक्षण के लिये आरक्षण की व्यवस्था कभी उपयोगी थी ही नहीं। इसीलिये मैं इस निर्णय का समर्थन करता हूं जो आरक्षण को हटाने के लिये किया गया है। मैं मद्रास से आये हुए अपने बन्धुओं को बताना चाहता हूं कि आज से 20 साल पहले भी मुसलमान लोक पृथक् प्रतिनिधान की व्यवस्था को उठा देने की सोच रहे थे, बशर्ते कि कतिपय संरक्षण उन्हें दे दिये जाते, पर जो विधान सन् 1935 के एक्ट के आधार पर बना उसमें संरक्षण की कोई व्यवस्था नहीं रखी गई थी। उनके अधिकारों के संरक्षण की जिम्मेदारी निर्देश पत्र के जरिये प्रान्त के गवर्नरों पर रखी गई थी। किन्तु आज स्थिति सर्वथा बदल गई है। अब तो हमारे अधिकारों के संरक्षण की व्यवस्था विधान में कर दी गई है। फिर पृथक् प्रतिनिधान की हमें अब क्या जरूरत रह जाती है? और फिर इस व्यवस्था से हमें मदद ही कैसे मिलेगी? इससे तो यही होगा कि हम और दलों के साथ मिलना ही न चाहेंगे। आखिर जब आप साम्प्रदायिक आधार पर चुनाव करेंगे तो यह जरूरी है कि आप एक न एक साम्प्रदायिक संगठन भी उसके लिये रखेंगे, जो उम्मीदवारों को नामंजूर करेगा और विधान सभा में काम करने के लिये अपना कार्यक्रम बनायेगा। इसका मतलब यह होगा कि जो वर्तमान वस्तुस्थिति है वह बनी रहेगी और इससे यह होगा कि साम्प्रदायिकता अपने बुरे से बुरे रूप में कायम रहेगी। इससे क्या आप यह उम्मीद करते हैं कि हमें इस व्यवस्था को अब उठा देना चाहिये। यह जरूरी है कि हम में से बहुत से लोग, जिनका विकास कि पुरानी परम्परा में हुआ है, उनके लिये इस अधिकार का त्यागना जरा कठिन होगा जिसका कि एक अरसे तक उन्होंने उपभोग किया है। पर यह काम हम अपने लिये नहीं करने जा रहे हैं बल्कि देश की आने वाली मुस्लिम पीढ़ियों के लिये। सर्वोत्तम मार्ग यही है कि हम बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर भरोसा करें। अगर आप पृथक् निर्वाचन की और जगहों

के आरक्षण की व्यवस्था भी करा लें तो बहुसंख्यक सम्प्रदाय को इस बात से कैसे रोक सकेंगे कि वह अपना निर्णय आप पर न लाद सकें। कोरी वक्तृता से तो आपकी रक्षा हो न पायेगी। आपको एक न एक दल के साथ मिलना ही होगा। अगर आप अपने को बिल्कुल अकेला कटा हुआ नहीं रखना चाहते हैं उनकी शर्तों पर आपको मिलना होगा। और फिर हम तो यह चाहते हैं कि हमारा राज्य सर्वथा असाम्प्रदायिक एवं ऐहिक हो। हमारे सामने एक मौका है और उसे हमें न छोड़ना चाहिये। एक वास्तविक असाम्प्रदायिक और ऐहिक राज्य के निर्माण में हमें बाधक न बनना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव को मेरा हार्दिक समर्थन प्राप्त है। जिस रिपोर्ट का इस प्रस्ताव में हवाला दिया गया है, वह हमारे श्रद्धास्पद एवं प्रिय नेता सरदार वल्लभभाई पटेल के अथक प्रयास के फलस्वरूप ही इस रूप में सामने आ सकी है। उन कतिपय कृतित्वों में से यह भी एक है जिनको इधर ही कुछ दिनों के भीतर प्राप्त करने का सारा श्रेय सरदार पटेल को है।

अवश्य ही कुछ ऐसी भी बातें हैं जिनको लेकर यत्र तत्र कुछ शिकायत भी हो सकती है। मुझे खुद ही शिकायत का मौका मिला है। पर इस प्रस्ताव का मुख्य सार यह है कि इसके कार्यान्वित होते ही, हमारा जो सुसम्बद्ध भारतीय राष्ट्र बनाने का एक ऐहिक राज्य निर्माण का जो स्वप्न है, उसकी पूर्ति का पथ प्रशस्त हो जायेगा। मुझे विश्वास है कि इस प्रस्ताव का परिणाम यह होगा कि साम्प्रदायिक झगड़े, जिन्होंने कि गत कई वर्षों से भारतीय इतिहास को कलंकित कर रखा था, सिर्फ कहानी मात्र रह जायेंगे।

यह तो मैं नहीं जानता कि दुनिया के अन्य देशों के अल्पसंख्यक वहां की राजनीति में क्या हिस्सा लेते हैं, पर भारतवर्ष में तो इस अल्पसंख्यक समस्या का ब्रिटिश शासन काल से ही सदा जबरदस्त हाथ रहा है। हिन्दुस्तान में दो तरह के अल्पसंख्यक हैं जैसा कि आप सभी जानते हैं। एक अल्पसंख्यक सम्प्रदाय तो वह है जो अपने आदमियों के लम्बे चौड़े कद के आधार पर और अपने बाहुल्य के आधार पर और इस तथ्य के कारण कि वे दुनिया के किसी भी भाग में अपना प्रबंध कर सकते हैं, अन्य अल्पसंख्यकों के दिलों में बल्कि यहां तक कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय के दिलों में भी साधारणत: त्रास पैदा करते हैं। दूसरा अल्पसंख्यक वर्ग वह है जो हमारे दिलों में दया और सहानुभूति पैदा करता है, जो निरंतर हमें अपनी उन भूलों की याद दिलाता है जो कि हमने अतीत में की हैं, हमारे उस व्यवहार की याद दिलाता है जो हमने उनके साथ पूर्व में किया है और जिसको लेकर उनको अनेक शिकायतें हैं और सही हैं। इस अल्पसंख्यक वर्ग के प्रति हमने जो भूले की हैं, उनका हमें सुधार करना ही होगा। मुझे खुशी है कि मैं यह कह सकता हूं कि प्रस्तुत रिपोर्ट में इस अल्पसंख्यक वर्ग के लिये, जो कि वस्तुत: हमारी दया और सहानुभूति का अधिकारी है, वाजिब ख्याल रखा गया है और दूसरे अल्पसंख्यक वर्ग की मांग पर ध्यान नहीं दिया गया है, जिसके लिये वह कुछ दिनों से शोर कर रहे हैं।

मैं इस प्रसंग में सभा का ध्यान उन अवस्थाओं की ओर आकृष्ट करूंगा जो आज आसाम में वर्तमान हैं। वहां की आबादी के आंकड़े ये हैं। सवर्ण हिन्दुओं की आबादी

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

39 प्रतिशत, मुसलमानों की 28.6 प्रतिशत और जनजाति वालों की आबादी 32.4 प्रतिशत। अब मैं आपसे एक सवाल करना चाहता हूं। अब आबादी की सूरत यह है तो उस में क्या इसकी जरूरत है कि किसी सम्प्रदाय के लिये स्थान सुरक्षित रखे जायें? मैं पूछता हूं कि जब वहां कोई बहुसख्यंक संप्रदाय है ही नहीं, जबकि वहां तथाकथित बहुसंख्यक सम्प्रदाय—यानी सवर्ण हिन्दुओं और जनजाति की आबादी में केवल 6 प्रतिशत का अन्तर है, जैसा कि आंकड़ों से स्पष्ट है, तो फिर क्या किसी भी सम्प्रदाय के लिये सुरक्षित स्थान की व्यवस्था की क्या जरूरत है? आशा है सभा इस पर विचार करेगी। हमारे प्रान्त में जहां विभिन्न सम्प्रदायों की आबादी में इतना कम अन्तर है, स्थान सम्बन्धी आरक्षण की व्यवस्था को आप परीक्षा के तौर पर उठाकर देख सकते हैं कि इसका परिणाम क्या होता है? अगर आपका अभिप्राय अन्ततोगत्वा यही है कि आरक्षण मूलक व्यवस्था हटा दी जाये, तो आप इस प्रयोग को हमारे ही प्रान्त से क्यों नहीं आरम्भ करते, जहां विभिन्न सम्प्रदायों की आबादी में बहुत थोड़ा ही अन्तर है। मैं सभा से आग्रह करूंगा कि वह मेरी इस बात पर समुचित विचार करे।

मेरे माननीय मित्र श्री सादुल्ला अभी यह शिकायत कर रहे थे, जैसा कि मैं उनकी बात से समझ पाया, कि आसाम में मुसलमानों के लिये स्थान सम्बन्धी संरक्षण की व्यवस्था नहीं है। अगर ऐसे प्रान्त हैं जहां मुसलमानों के लिये संरक्षण की जरूरत नहीं है तो मैं कहूंगा कि आसाम उनमें एक जरूर है। मै यह इसलिये कह रहा हूं कि वहां मुसलमानों की आबादी 24 प्रतिशत है, जैसा कि आप ने फरमाया है और यह आबादी अवश्य ही एक बहुत ही बड़ी आबादी है। इस मौके पर मैं इस बात का खंडन जरूर करूंगा कि हमारे प्रान्त के मुसलमान स्थान सम्बन्धी आरक्षण मांगते हैं इसके प्रतिकूल उनके मुस्लिम निर्वाचन क्षेत्रों से ही आये हुए कितने ऐसे मुस्लिम सदस्य आसाम की विधान सभा में हैं, जो स्थान सम्बन्धी आरक्षण से सहमत नहीं हैं, मैं समझता हूं कि हम में से किसी के लिये भी यह व्यर्थ है कि वह आसाम के मुसलमानों के लिये जगहों के आरक्षण की चर्चा यहां करे।

सभा का ध्यान मैं आकृष्ट करना चाहता हूं माननीय मित्र श्री लारी की मांग की तरफ। आपने अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्र बनाने की तथा सामूहिक मतदान की प्रणाली अपनाये जाने की मांग की है। उनकी मांग की पूर्ति से तो अध्यक्ष महोदय, मुझे यह डर है कि इस प्रस्ताव का मूल उद्देश्य ही समाप्त हो जायेगा। अगर मुसलमान या अन्य किसी सम्प्रदाय को यह मालूम होता है कि अगर धर्म या सम्प्रदाय के आधार पर वह किसी वर्ग से मिल जायेंगे, तो भविष्य में उनको अपनी जगहें जरूर मिल जायेंगी, तो इसका नतीजा यह होगा कि साम्प्रदायिकता की बुराई यहां बनी रह जायेगी। अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्रों के चुनाव में मुसलमान आपस में मिल जायेंगे और अपने लिये एक स्थान पा ही लेंगे। जिस किसी भी खास निर्वाचन क्षेत्र में हिन्दुओं की या अन्य सम्प्रदाय की संख्या कम होगी वह आपस में मिल जायेंगे और इस तरह अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्रों के रखने से और सामूहिक मतदान की पद्धति अपनाने से हमारा जो मूल अभिप्राय है वही नष्ट हो जायेगा।

दूसरी बात जिसकी ओर सभा का ध्यान मैं आकृष्ट करना चाहता हूं वह यह है। आबादी के आंकड़ों को मद्देनजर रखते हुए क्या यह वांछनीय होगा कि किसी भी ऐसे सम्प्रदाय को, जिसके लिये जगहें सुरक्षित कर दी हैं, आम जगहों के लिये चुनाव लड़ने की इजाजत दी जाये? थोड़ी देर के लिये आइये, हम इस स्थिति की जांच-पड़ताल ही कर लें। हमारे प्रान्त में सवर्ण हिन्दुओं की संख्या केवल 39.6 प्रतिशत है और जनजातियों की संख्या है 32.4 प्रतिशत। अगर अपनी जगहों के अलावा आम जगहों से भी चुनाव लड़ने की इजाजत जनजातियों को मिलती है, तो उनमें से कुछ जगहें तो उनको मिल ही जायेंगी। मैं सभा से कहता हूं कि वह इस पर विचार तो करे कि क्या यह वांछनीय होगा कि जनजातियों को आम जगहों के लिये चुनाव लड़ने की अनुमति दी जाये? पर मैं ईमानदारी से यह जरूर कहूंगा कि जनजातियों की जो संख्या बताई गई है यानी 32.6 प्रतिशत, वह शायद बिल्कुल सही संख्या नहीं हैं मुझे बताया गया है कि चाय बागानों की आबादी का कुछ अंश, जो यहां आंकड़ों में शामिल किये गये हैं, वस्तुतः मैदानों में रहता है और वह आम जगहों के निर्वाचन क्षेत्र में शामिल होगा। उस दशा में मैं इस बात की वकालत करूंगा कि इन आंकड़ों में परिवर्तन होना चाहिये। मेरे कहने का मतलब यह है कि अगर यह बात सही है कि करीब दस लाख की आबादी, जिसे गलती से जनजाति की आबादी में शामिल कर दिया गया है, वह वस्तुतः जनजाति के लोगों की नहीं है, तो इस सारे आंकड़े को हमें दुबारा ठीक कर लेना चाहिये।

अध्यक्षः क्या माननीय सदस्य को मैं यह बता दूं कि इस समय हम जनजाति के प्रश्न पर नहीं विचार कर रहे हैं हम दूसरों के सम्बन्ध में गौर कर रहे हैं। इसलिये माननीय सदस्य को यह चाहिये कि जनजाति की चर्चा छोड़कर आरक्षण सम्बन्धी मूल प्रश्न पर बोलें। समय आने पर वह अपनी बात कह सकते हैं, अगर उसकी जरूरत हो, पर इस समय नहीं। अन्यथा मुझे औरों को भी जनजाति के बारे में बोलने की अनुमति देनी होगी जो मैं नहीं चाहता।

श्री रोहिणी कुमार चौधरीः आपने मेरी भूल सुधार दी, श्रीमान्। अस्तु मैं पुनः इस रिपोर्ट के लिये साधुवाद देता हूं। खास तौर पर हमें खुशी इस बात की है कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिये सुरक्षित जगहों की व्यवस्था की गई है। हम सब यही आशा करते हैं कि निकट भविष्य में ही—इसके लिये हमें दस वर्षों तक नहीं रुकना पड़ेगा बल्कि इससे बहुत पहले ही—उन जातियों के लोग जिन्हें कि हम अनुसूचित जाति का नाम देते हैं, तेजी से तरक्की करेंगे और इस देश के अन्य सम्प्रदायों के समकक्ष आ जायेंगे।

इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूं, श्रीमान्।

श्री फ्रेंक एन्थोनी (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, जो रिपोर्ट सभा के समक्ष माननीय सरदार पटेल ने रखी है उसके पैरा 5 के अन्त में एक वाक्य आया है, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इस प्रस्ताव से उन प्रावधानों पर कोई असर न आयेगा, जिनके द्वारा देश के ऐंग्लो इंडियन सम्प्रदाय को प्रतिनिधान देने की व्यवस्था की गई है और इसी के कारण मैं यहां परामर्शदातृ समिति को अपनी कृतज्ञता ज्ञापन के

[श्री फ्रेंक एन्थोनी]

लिये खड़ा हुआ हूं, जिसने सरदार पटेल के पथप्रदर्शन में ऐसी उदारता और मैत्री का हाथ हमारी ओर बढ़ाया है। मैं यह जरूर मंजूर करूंगा कि अल्पसंख्यक उपसमिति एवं परामर्शदातृ समिति की बैठकों के सिलसिले में अनेक ऐसे अवसर आये जब मैं बहुत चिन्ताकुल और व्यग्र हो गया था। मैं यह जानता हूं, श्रीमान्, कि अपनी बातों का विवरण देना न सिर्फ अहंभाव का परिचायक है बल्कि इससे अक्सर लोगों को चिढ़ पैदा हो जाती है। अपने संप्रदाय का प्रतिनिधित्व करने में मुझे सदा इस विश्वास से प्रेरणा मिलती रही है कि अपने एंग्लो इंडियन सम्प्रदाय का, इसका पूर्ववर्ती इतिहास कुछ भी रहा हो, असली घर भारतवर्ष ही है, वह अपने घर के लिये अन्य किसी देश की कल्पना नहीं कर सकता और इसे सही मायने में कहीं घर मिल सकता है तो भारत में ही मिल सकता है और तब जबकि इस देश के निवासी उसे हृदय से स्वीकार कर लें और अपना लें। यह विश्वास मेरे लिये अपने धर्म का एक अंग रहा है। जब अल्पसंख्यकों के अधिकारों के सम्बन्ध में वाद-विवाद चल रहा था और उनकी रूपरेखा निश्चित की जा रही थी, उस समय मेरे मन में दो सवाल उठा करते थे। एक तो यह कि क्या भारतीय नेतृवर्ग का बात में समर्थ हो सकेगा कि वह अतीत को भूल जाये और क्षमा कर दे? दूसरा प्रश्न मन में यह उठता था, अगर उस देश का नेतृवर्ग अतीत को भूल जाये और उसे क्षमा भी कर दे तो क्या वह इस अपने सम्प्रदाय की, जो छोटा तो जरूर है पर महत्वशून्य नहीं है, विशेष आवश्यकताओं और कठिनाइयों को भी स्वीकार करने के लिये तैयार हो जायेगा? आज मैं वर्णनातीत कृतज्ञता की भावना से यह कह सकता हूं, श्रीमान्, कि भारत का नेतृवर्ग न केवल अतीत को भूल जाने और माफ कर देने में भी समर्थ हुआ है, बल्कि एंग्लो-इंडियन सम्प्रदाय की, जिसका नेतृत्व करने का मुझे गौरव प्राप्त है, विशेष आवश्यकताओं और कठिनाइयों को भी समझने और स्वीकार करने में वह समर्थ हुआ है। मेरा यह विश्वास है कि इस लघु सम्प्रदाय के प्रति मैत्री का हाथ बढ़ाकर परामर्शदातृ समिति ने एक अपूर्व उदारता का परिचय दिया है। जब हम इन समस्याओं पर बहस मुबाहिसा कर रहे थे तो अक्सर मैं यह महसूस किया करता था कि समिति के बहुसंख्यक सदस्यों के मन में ये प्रश्न जरूर वर्तमान थे, यद्यपि उन्होंने इसे व्यक्त नहीं किया, पर उनके दिमाग में यह प्रश्न जरूर नाच रहे थे जिन्होंने मेरे अनुरोध के प्रति अनुकूल रुख अपनाने में उन्हें प्रेरणा दी और शायद उन्हीं प्रश्नों ने आगे चलकर एक ठोस शक्ल अख्तियार की। सम्भवत: उनके दिलों में उठने वाले सवाल यह थे। ''एंग्लो-इंडियन समाज की ओर से तो आप बराबरी के भी रुख की मांग नहीं कर सकते हैं? आपके सम्प्रदाय ने हमारे स्वातंत्र्य-संग्राम के लिये कुर्बानी करना तो दूर रहा उलटे हमारे उद्देश्य को कुचलने वाली प्रतिक्रियामूलक शक्तियों का साथ दिया। क्या आपके सम्प्रदाय के सम्बन्ध में हमारा यह कहना गलत है?'' अधिकतर सदस्यों के मन में सम्भवत: यही प्रश्न थे, जो बद्धमूल धारणा की तरह घर कर चुके थे। मैं समझ रहा था कि ये प्रश्न हमारी राह में बाधक होंगे। कभी-कभी तो ऐसा अनुभव करता था कि यह बाधा ऐसी है जो अजेय है। किन्तु बावजूद इन सब बातों के हमारे सम्प्रदाय को बहुसंख्यक वर्ग ने एक भारतीय अल्पसंख्यक समाज के रूप में स्वीकार किया और इतना ही नहीं इसके साथ उन्होंने खास तौर पर रियायत का सलूक किया और इसकी विशेष कठिनाइयों को उन्होंने मंजूर किया और उसकी फिक्र की। इस सम्बन्ध में, श्रीमान्, मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापन करना चाहता हूं—शब्दों द्वारा पर्याप्त रूप से इस कृतज्ञता का

ज्ञापन करना मेरे लिये सम्भव नहीं है—परामर्शदातृ समिति के सभापति श्री सरदार पटेल के प्रति जिन्होंने इस सम्बन्ध में बड़ा अनुकूल रुख अपनाया। इस सम्बन्ध में सभा में दी हुई कतिपय वक्तृताओं से शायद यह ख्याल पैदा हो कि परामर्शदातृ समिति तो ऐसी भावना से अनुप्राणित थी कि अल्पसंख्यकों को वह दिया ही न जाये जो वह चाहते हैं या अपने लिये जरूरी समझते हैं। मैं इस धारणा का खंडन करने के लिये ही खड़ा हुआ हूं। बहुतेरे सदस्यों ने इस पक्ष का प्रतिपादन किया ठोस तर्क रखते हुये और सर्वथा औचित्य का प्रदर्शन करते हुए कि अल्पसंख्यकों के अनुरोध को हमें न स्वीकार करना चाहिए, क्योंकि उससे देश हित को नुकसान पहुंचेगा। जब मैं इनकी बातें सुनता था तो अक्सर यही महसूस करता था कि अल्पसंख्यकों का अनुरोध कभी न स्वीकार किया जायेगा, क्योंकि तर्क के आधार पर, यहां तक कि औचित्य के भी आधार पर और राष्ट्र के एकीकरण की आवश्यकता को देखते हुए उनकी बहुत सी मांगें ऐसी थीं जिनका कभी समर्थन ही नहीं किया जा सकता था। किन्तु सौभाग्यवश सरदार पटेल जैसा व्यक्ति उस समिति का सभापति था। मैंने देखा कि वह तर्कों की उपेक्षा कर जाते थे और कभी-कभी तो ऐसे तर्कों को वह अनसुनी कर देते थे जिसका कोई तर्क-संगत जवाब ही नहीं हो सकता था, जो सैद्धांतिक दृष्टि से सर्वथा अकाट्य थे। उन्होंने समिति के सदस्यों को बारहा यह साफ साफ बता दिया कि उस सम्बन्ध में उन्होंने जो ढंग अपनाया है वह न तो तर्क से अनुप्राणित होकर, न औचित्य से प्रेरित होकर और न शास्त्रीय सिद्धांतों ही से प्रभावित होकर, बल्कि वह केवल इस प्रयास के लिये अपनाया है कि अल्पसंख्यकों की अनुभूति को उनकी वास्तविक मनोवैज्ञानिक दशा को समझा जा सके। उन्होंने यह साफ साफ बता दिया था कि वह जिस सिद्धांत पर काम कर रहे हैं वह यह है। इस सम्बन्ध में हमारे लिये यह देखना उतना जरूरी नहीं है कि इस समस्या के लिये जो कर रहे हैं वह सिद्धांत के हिसाब से, शास्त्रीय वाद के हिसाब से कहां तक ठीक है। ज्यादा जरूरी यह देखना है कि अल्पसंख्यकों के अनुरोध कुछ भी क्यों न हों अगर वह बिल्कुल ही पागलपन के न हों तो हमें जहां तक शक्य हो उनकी पूर्ति करनी चाहिये, क्योंकि अगर उनके मन में कोई डर बैठा हुआ है जिसके कारण वह ये मांगें करते हैं, तो फिर वह डर चाहे फिर वास्तविक हो या काल्पनिक हो, देशहित का ख्याल रखते हुए अच्छा यही होगा कि उनके भय का निराकरण कर दिया जाये। उन्होंने बताया कि हमें अल्पसंख्यकों की मनोदशा का ध्यान रखते हुए इस समस्या पर विचार करना चाहिये। यही कारण है कि हमें विशेष सुविधा देने वाले प्रावधान विधान में रखे गये हैं। तर्क या सिद्धांत के आधार पर तो हमें इन सुविधाओं के मांगने का हक ही नहीं है।

एक ऐसे व्यक्ति की हैसियत से, श्रीमान्, जो एक अरसा से अल्पसंख्यकों की मनोवैज्ञानिक दशा को और उनकी कठिनाइयों को समझता है, मैंने कभी-कभी इन बात को धृष्टता ही समझा है कि एक अल्पसंख्यक सम्प्रदाय का कोई प्रतिनिधि दूसरे अल्पसंख्यक वर्ग को उपदेश दे और कहे कि ''अमुक काम आपके लिये हानिकर है''। इसलिये मैं ऐसी कोई बात नहीं कहूंगा जिससे यह गंध मिलती हो कि मैं मुस्लिम बन्धुओं को उपदेश दे रहा हूं। पर मैं यह जरूर कहना चाहता हूं कि परामर्शदातृ समिति में जो भी फैसले हुए हैं वह, जहां तक कि दूसरे अल्पसंख्यकों का सम्बन्ध है, सर्व सम्मति से हुए थे।

[श्री फ्रेंक एन्थोनी]

पर परामर्शदातृ समिति और कर ही क्या सकती थी? मुस्लिम प्रतिनिधियों की राय एक नहीं थी उनके भिन्न-भिन्न प्रतिनिधियों ने भिन्न-भिन्न बातें कहीं। ऐसी सूरत में हम दूसरा फैसला करते ही क्या? विधान-परिषद् में भी उनमें मतैक्य नहीं था। इसलिये जब मुस्लिम प्रतिनिधियों में परस्पर इतना मतभेद रहा तो परामर्शदातृ समिति के सामने इस फैसले को मंजूर करने के अलावा और दूसरा रास्ता ही क्या था और इस हालत में जबकि इस फैसले को अन्य सभी सम्प्रदायों ने सर्वसम्मति से स्वीकार किया और बहुत से मुसलमानों ने भी इसका समर्थन किया? अध्यक्ष महोदय, परामर्शदातृ समिति के इस फैसले के सम्बन्ध में कह सकता हूं कि यह जोर जबर्दस्ती से नहीं किये गये हैं बल्कि मैत्री और सद्भावनापूर्ण परामर्श के बाद, परस्पर मिलजुलकर हमने इन्हें मंजूर किया है।

मेरा यह विश्वास है कि इन निर्णयों को फलीभूत बनाने में सरदार पटेल ने वह सहायता दी है जो शायद इधर कुछ वर्षों के भीतर और दूसरा कोई व्यक्ति दे नहीं सकता था। उन्होंने राष्ट्र के एकीकरण और उसकी समुन्नति के कार्य के लिये अल्पसंख्यक वर्गों को कुछ ऐसा अनुप्राणित किया कि वे हृदय से इसमें लग गये और उसके फलस्वरूप हम सर्वसम्मत निर्णय पर पहुंच सके।

कुछ लोग अभी भी यह महसूस करते हैं कि अन्तर्वर्त्ती काल के लिये विधान में हमें इतने संरक्षण नहीं रखने चाहिये थे। किन्तु मैं अन्यथा समझता हूं। मैं यह महसूस करता हूं कि यह एक अच्छी बात है, एक हितकर बात है कि हमने दस वर्ष की एक सीमित अवधि निर्धारित कर दी है। उन बन्धुओं को जो इसके लिये चिन्तित हैं कि शीघ्र ही पूर्ण रूप से देश का एकीकरण हो जाना चाहिये, मैं यह कहूंगा—''एक महती जाति के लिये दस वर्ष की अवधि उसके इतिहास के एक क्षण का भी एक लघु हिस्सा है।'' हमारा लक्ष्य है एक सर्वथा ऐहिक और लोकतंत्रीय राज्य की स्थापना। अभी हम अपने इस लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाये हैं। पर यह जरूर है कि हमारा लक्ष्य बहुत दूर नहीं हैं इस लक्ष्य तक पहुंचने में, हो सकता है हमें कई बार गिरना और उठना पड़े पर इस मंजिल पर पहुंचने तक के लिये हमने जो कतिपय संरक्षण अल्पसंख्यकों को दिये हैं, वह इस बात के लिये बहुत ही हितकर और लाभप्रद होंगे कि अल्पसंख्यक वर्ग इस अन्तर्वर्ती काल को पार कर जायें।

कुछ लोगों का यह ख्याल है, खास करके अन्य देशों से आये हुए पत्रकारों का, कि हिन्दुस्तान में आज अल्पसंख्यकों को सताया जा रहा है; अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि रूप में जो लोग हैं वे वस्तुत: अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व नहीं करते या भय और जोर जबरदस्ती की भावना ने उनको सर्वथा निर्जीव बना दिया है; सुतरां उनके हृदय में जो भय है उसे वे व्यक्त नहीं करते। मुझे तो भय का कभी कोई ख्याल मन में पैदा नहीं हुआ। अपना विचार व्यक्त करने में मुझ पर तो कभी कोई जोर जबरदस्ती नहीं की गई है। मैं तो कहूंगा कि अल्पसंख्यकों के जो प्रतिनिधि हैं वे आज किसी दल विशेष के हाथ की कठपुतली नहीं हैं। जब हम यह कहते हैं कि हम अपने दिलों में यही महसूस करते

हैं कि हमारे प्रति बड़ी उदारता बरती गई है, तो हम किसी जोर जबरदस्ती या डर के कारण यह नहीं कहते हैं बल्कि हम हृदय से यह कहते हैं। पर साथ ही मैं यह भी कहूंगा कि हम भ्रमग्रस्त नहीं हैं। हम चापलूसी करना नहीं जानते हैं। कतिपय अल्पसंख्यक सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों को मैंने यह कहते सुना है कि भारतभूमि में जो कुछ हो रहा है वह सब का सब ही ठीक नहीं है। मैं पूछता हूं सब कुछ ठीक है ही किस मुल्क में? गलतफहमी के कारण जरूर मौजूद हैं। आज मैं देखता हूं कि कुछ प्रान्तों में बड़ी जल्दीबाजी में कतिपय नीतियों को अमल में लाया जा रहा है और मैं यह महसूस करता हूं कि साम्प्रदायिक स्वार्थों की दुर्भावना से ही प्रेरित होकर इन कतिपय नीतियों को शीघ्रता से प्रयोग में लाया जा रहा है। इनमें मैं एक नई तरह की साम्प्रदायिकता देख रहा हूं और वह है भाषा एवं प्रान्तीयता की साम्प्रदायिकता, जो हमारी पुरानी और मरी हुई धर्मगत साम्प्रदायिकता से कहीं ज्यादा खतरनाक और बुरा असर पैदा करने वाली है। साम्प्रदायिकता रूपी अनेक फणधारी विषधर इन नीतियों के द्वारा कई क्षेत्रों में मुझे सर उठाता दिखाई दे रहा है। मैं देखता हूं कि जिन लोगों को इस नई साम्प्रदायिकता से अत्यधिक प्रेम है, वे धार्मिक साम्प्रदायिकता की आड़ में, जो कि आज मर चुकी है, अपनी भाषा और प्रांतीयता की साम्प्रदायकिता का प्रश्रय देने का प्रयास कर रहे हैं हम यह देख रहे हैं, श्रीमान्—बिना किसी दुर्भाव के मैं यह कह रहा हूं—कि इस महती संस्था के बहुत से सदस्य नियमत: तो कांग्रेस के सदस्य हैं पर वस्तुत: भावना से वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिन्दू महासभा के सदस्य हैं। मुझे दुर्भाग्यवश रोज ही कांग्रेस दल के प्रभावशाली और सम्मानित नेताओं के ऐसे भाषण समाचार पत्रों में देखने को मिलते हैं, जिनमें कहा गया होता है कि भारतीय स्वातन्त्र्य और भारतीय संस्कृति का, हिन्दू राज और हिन्दू संस्कृति के अतिरिक्त और अर्थ ही क्या हो सकता है? इन बातों को लेकर ही शक पैदा होता है। पर किस महान राष्ट्र को अपनी महानता के लक्ष्य-पथ पर चलते हुये उठना और गिरना नहीं पड़ा है? मुख्य बात जो हमें करनी थी वह हमने निश्चित कर ली है। हमने अपना लक्ष्य तय किया है और उसकी प्राप्ति के लिये हम सही दिशा में चल पड़े हैं। एक ऐहिक लोकतंत्रीय राज्य की स्थापना ही हमारा लक्ष्य है। ऊंचे-ऊंचे सिद्धांतों का नारा लगाना आप फिर शुरू करें, यह बेकार है। उससे आप वास्तविकता को नहीं बदल सकते। हमारा जोर शोर से यह कहना कि हमने ऐहिक; लोकतंत्रीय राज्य की स्थापना कर ली है, गलत है क्योंकि अपने इस लक्ष्य को अभी हम प्राप्त नहीं कर सके हैं। उसे हमें प्राप्त करना है। पर जैसा कि मैंने कहा है, यह जरूर है कि हम सही दिशा में चल पड़े हैं। जैसा कि हमारे प्रधानमंत्री ने अभी उस दिन सभा में कहा है, जहां कि मैं भी मौजूद था, आरक्षण की व्यवस्था को उठाकर और उसे केवल दस साल तक के लिये सीमित रखकर बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने और विशेषत: देश के नेतृवर्ग ने यह व्यक्त किया है, कर दिया है कि उन्हें इस बात के लिये अपने ऊपर विश्वास है कि वह अपने लक्ष्य को निश्चय ही प्राप्त करेंगे। उनके लिये तो यह काम उनके धर्म का एक अंग है। अल्पसंख्यकों की किसी मांग को समाप्त करने के अभिप्राय से प्रेरित होकर उन्होंने ऐसा नहीं किया है। बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने अल्पसंख्यक वर्गों से समझौता करके अपने कर्त्तव्य का उसे एक अंग समझ कर ऐसा किया है। मेरा तो यह विश्वास है कि भारतवर्ष एक ऐहिक राज्य बनकर ही अपना पूर्ण विकास प्राप्त कर सकता है। अगर अतीत की ओर जाने का और प्राचीन परम्परा को पुनर्जीवित करने का कोई प्रयत्न किया गया, तो इसका अवश्यम्भावी परिणाम यही होगा

[श्री फ्रेंक एन्थोनी]

कि इस महान् देश के शक्तिशाली एवं समृद्ध होने की जो सम्भावनायें हैं, वह निर्जीव हो जायेंगी और इसकी उन्नति रुक जायेगी। मैं तो यहां तक कहता हूं कि लक्ष्य प्राप्ति के निमित्त जो हमारा अभियान हो—अभियान इसलिये कह रहा हूं कि हमें अभी भी अपना लक्ष्य प्राप्त करना बाकी है—उसमें अल्पसंख्यक वर्गों की अग्रिम पंक्ति में रहना होगा। ऐसा अल्पसंख्यक समुदाय जो यह सोचता हो कि पन्थ या वर्ग का आसरा लेकर वह समृद्धि पा सकता है, उसके लिये मैं कहूंगा कि वह अपना विनाश बुला रहा है। अपनी बात समाप्त करने से पहले, श्रीमान्, मैं एक और बात की भी प्रसंगात् चर्चा कर देना चाहता हूं। कुछ लोग यह कहते हैं—"वाह मिस्टर एंथोनी, तुमने तो बड़ी बड़ी ऊंची बातें कहीं हैं और बड़े ऊंचे नाम उद्गार व्यक्त किये हैं। अगर तुम्हारी ऐसी ही प्रबल अनुभूति है तो फिर अपने सम्प्रदाय के नाम के पहले जो 'एंग्लो' शब्द लगा रखा है उसे हटा क्यों नहीं देते?" इसके जवाब में मुझे यह कहना है—'एंग्लो इंडियन' शब्द चाहे अच्छा हो या बुरा, पर सही या गलत इस शब्द के पीछे बहुत सी ऐसी बातें हैं जिन्हें मैं बहुत ही प्रिय मानता हूं।" पर मैं अपने मित्र से भी दो कदम आगे बढ़कर उनसे कहता हूं–"आप अपने मार्का 'हिन्दू' को हटा दीजिये और फौरन ही मैं 'एंग्लो' शब्द को अपने सम्प्रदाय के नाम के आगे से हटा दूंगा। जिस दिन आप अपने 'हिन्दू' मार्का को हटा देंगे, जिस दिन आप भूल जायेंगे कि आप हिन्दू हैं, उसी दिन बल्कि उससे दो दिन पहले ही मैं लिखा पढ़ी में और अगर जरूरत हो तो ढोल पीट कर मैं 'एंग्लो' शब्द को अपने सम्प्रदाय के नाम से हटा दूंगा।" और यह इसलिये आप विश्वास करें कि जिस दिन हम सभी अपने इन मार्कों को या संज्ञाओं को हटाना शुरू कर देंगे, न केवल उनके लिये अपनी मौखिक सहानुभूति रखते हुये, न केवल उनके लिये शाब्दिक निष्ठा रखते हुये, बल्कि उनके लिये अपने दिलों में सच्ची अनुभूति रखते हुय जिस दिन हम अपने कर्मों द्वारा, न कि केवल वाणी द्वारा, ऐहिक राज्य के प्रति अपनी गम्भीर निष्ठा को फलवती बनाने के हेतु ऐसा करना शुरू करेंगे, वह दिन देशवासियों के लिये गौरव का दिन होगा और भारत के सभी अल्पसंख्यक समुदाय उसका सबसे आगे बढ़कर अभिनन्दन करेंगे। उस पवित्र दिन के उदित होने के पूर्व ही यहां के अल्पसंख्यक यह भूल चुके होंगे कि वह यहां अल्पसंख्यक हैं और उनके दिलों में यही भाव भर गया रहेगा कि वह केवल भारतीय हैं और सदा रहेंगे।

***माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस प्रस्ताव के लिये इतनी सद्भावना प्रकट की जा चुकी है कि इसके समर्थन के लिये मेरा खड़ा होना अनावश्यक ही है। किन्तु इसके समर्थन के लिये मैं एक मानसिक प्रेरणा का अनुभव कर रहा हूं, क्योंकि देश के भाग्य में जो इतना बड़ा ऐतिहासिक परिवर्तन होने जा रहा है, उसके समर्थन में मैं भी शरीक होना चाहता हूं। मेरे साथी उपप्रधानमंत्री ने जो प्रस्ताव सभा के समक्ष उपस्थित किया है, वह वस्तुत: एक ऐतिहासिक प्रस्ताव है। इस प्रस्ताव का अर्थ यह है कि हम न केवल उस बात का परित्याग ही करने जा रहे हैं जो कि बुरी है, बल्कि हम इसे सदा के लिये समाप्त कर अपनी पूरी शक्ति के साथ यह दृढ़ निश्चय कर रहे हैं कि हम एक ऐसे पथ पर चलेंगे, जिसे राष्ट्र के प्रत्येक वर्ग के लिये हम बुनियादी तौर पर अच्छा समझते हैं।

मुझे विश्वास है कि हम सभी जो यहां उपस्थित हैं, इस बात को बखूबी समझ गये हैं कि पार्थक्य की बात से, चाहे वह पृथक् निर्वाचन की शक्ल में रही हो या अन्य किसी रूप में, हमारे देश का और उसके निवासियों का बड़ा ही भयानक अहित हुआ है। कुछ दिन पहले हमने यह निर्णय किया था कि पृथक् निर्वाचन की दूषित पद्धति को हम जरूर हटा देंगे। यह यहां की सबसे बड़ी बुराई थी। हमने यह निर्णय जरूर किया था और बड़ी अनिच्छा के साथ कि आरक्षण की कुछ न कुछ व्यवस्था अभी हम जारी रहने देंगे। आरक्षण की व्यवस्था को हमने जो अनिच्छा से रखा इसके दो कारण थे। पहला कारण तो यह था कि हमने यह अनुभव किया कि हम इस व्यवस्था को उठा नहीं सकते जब तक कि अल्पसंख्यकों की सद्‌भावना हम न प्राप्त कर लें। यह बात सरासर उन पर निर्भर करती थी कि वह खुद आगे बढ़ें और कहें कि हमें आरक्षण की आवश्यकता नहीं है। बहुसंख्यक सम्प्रदाय ने अतीत में अल्पसंख्यकों को जो आश्वासन दिये हैं उनको देखते हुए हमारे लिये यह कभी शोभनीय नहीं है कि हम किसी निर्णय को जबरन अल्पसंख्यकों से स्वीकार करायें। इसके अलावा यों भी ऐसा करना कुछ अच्छा नहीं मालूम होता। दूसरा कारण यह था कि हमें अपने दिलों में ही इसका पूरा भरोसा नहीं था कि हम लोग और देश के लोग, सभी आरक्षणों के उठा दिये जाने पर किस तरह शासन की व्यवस्था चलायेंगे, इसलिये भी हम लोगों ने आरक्षण की व्यवस्था को मान लिया पर हमारे दिलों में यह सन्देह जरूर रहा है कि एक बुरी व्यवस्था के सम्बन्ध में निर्णय करते हुए शायद हमने कमजोरी ही दिखलाई है। इसलिये जब यही प्रश्न एक दूसरे प्रसंग में सामने आया तो हमने यह विचार किया कि अनुसूचित जातियों के लिये तो आरक्षण की व्यवस्था रहने दी जाये पर शेष सबके लिये समाप्त कर दी जाये। मैंने इस प्रस्ताव को बड़ी तत्परता और खुशी से स्वीकार किया। इसे मंजूर करने में मुझे ऐसा महसूस हुआ कि मेरी एक बहुत बड़ी तकलीफ दूर हुई। यह सब इसलिये कि अपने राजनीतिक क्षेत्र में पृथक् निर्वाचन या अन्य कोई अलगाव की व्यवस्था रखने के खिलाफ मेरे दिल और दिमाग में एक मुद्दत से संघर्ष चल रहा था और मैं जितना ही इस मसले पर सोचता था मैं यही अनुभव करता था ऐसी व्यवस्था को उठाना ही सही बात है, न केवल शुद्ध राष्ट्रीयता की दृष्टि से—यह कार्य राष्ट्रीयता की दृष्टि से सही तो है ही—बल्कि हर अलग-अलग वर्ग के हित के ख्याल से भी या आप यह कह सकते हैं कि बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक सभी के हित के लिये यह कार्य सही है।

हम सभी अपने को राष्ट्रीयतावादी कहते हैं पर हमने अपने-अपने दिलों में राष्ट्रीयता की जो कल्पना कर रखी है वह शायद आपस में मिलती जुलती न होगी और भिन्न-भिन्न होंगी। हम सभी अपने को राष्ट्रीयतावादी कहते हैं और हमारा ऐसा कहना सही भी है पर फिर भी हम में से बहुत कम लोग ऐसे होंगे जो इस पार्थक्य-मूलक प्रवृत्तियों से, चाहे वह साम्प्रदायिक हों या प्रान्तीयता से सम्बन्ध रखती हों या अन्य किसी बात से, सर्वथा स्वतंत्र हों। हम में ये प्रवृत्तियां वर्तमान हैं पर इसका मतलब यह नहीं है कि हम इनको दूर करने का प्रयत्न न करें और इनके सामने सर झुका दें। हां यह जरूर है कि अपनी इन दुष्प्रवृत्तियों को छिपाने के लिये हमें राष्ट्रीयता का जामा हर्गिज न अपनाना चाहिये।

इसलिये जब मैंने इस मसले पर गौर किया तो मैं इसी नतीजे पर पहुंचा कि अगर अपने जातीय इतिहास की वर्तमान स्थिति में, जबकि हम अपने विधान का निर्माण कर

[माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू]

रहे हैं, जो हो सकता है बहुत स्थायी न हो—क्योंकि दुनिया में आखिर परिवर्तन होता ही रहता है, क्याोंकि हम तो यही चाहते हैं कि हमारा विधान काफी ठोस और स्थायी हो–हम इसमें कोई ऐसी बात रखते हैं जो सरीहन गलत है और जिसकी वजह से यह तय समझिये कि लोग गलत ही रास्ता पकड़ेंगे तो हमारा यह काम देश के हक में बड़ा बुरा होगा। कुछ दिन पहले एक दूसरे प्रश्न के प्रसंग में हमने यह निर्णय किया था कि साम्प्रदायिकता से या बिलगाव पैदा करने वाली अन्य किसी बात ही से हम कोई सरोकार न रखेंगे। उस समय किसी ने हमसे यह ठीक ही पूछा था कि ऐसी अवस्था में हम आरक्षणों की व्यवस्था क्यों रख रहें हैं क्योंकि इससे राजनीतिक क्षेत्र में लोग अपने-अपने वर्ग की बात सोचने लगेंगे।

मैं यह चाहता हूं कि इस मसले पर—चाहे अल्पसंख्यकों के लिये जगह के आरक्षण का सवाल हो या किसी प्रकार के संरक्षण का प्रश्न हो—आप वस्तुस्थिति को दृष्टि में रखते हुए विचार करें। ऐसे संरक्षण का या अन्य प्रकार के किसी संरक्षण का उस हालत में तो कुछ मानी हैं जबकि आपके यहां कोई निरंकुश या विदेशी शासन हो। पर जब आपके देश में प्रजातंत्रात्मक शासन व्यवस्था चालू है तो उस हालत में इस तरह के आरक्षण की व्यवस्था रखने से उस वर्ग को, जिसके लिये व्यवस्था की जाती है वस्तुत: लाभ के बदले नुकसान की ही ज्यादा सम्भावना रहती है। जबकि देश में कोई बाहरी हुकूमत हो या निरंकुश राजा हो तो उस हालत में तो सम्भव है कि संरक्षण आपके लिये लाभप्रद हो क्योंकि राजा आपमें फूट पैदा करा सकता है। पर जब आप पूर्ण लोकतंत्रात्मक व्यवस्था के विरुद्ध हैं तो अगर बहुत ही छोटे अल्पसंख्यक वर्ग को भी आप कोई संरक्षण देते हैं तो उसका परिणाम यह होगा कि वह अल्पसंख्यक वर्ग हमेशा के लिये आपसे कट जायेगा। हो सकता है कि संरक्षण से कुछ परित्राण उसे प्राप्त हो पर यह भी तो सोचिये उसके लिये उसे कीमत कितनी बड़ी चुकानी पड़ रही है। वह आपसे कट कर हमेशा के लिये अलग हो जायेगा, और बहुसंख्यक सम्प्रदाय के साथ न चलकर वह बिचारा एक अलग ही दिशा में चलेगा, अवश्य ही यह मैं राजनीतिक दृष्टिकोण से कह रहा हूं। बहुसंख्यक सम्प्रदाय की हमदर्दी और भाईचारा खोकर ही उसे यह संरक्षण मिलेगा। लोकतंत्रीय व्यवस्था में तो देर से हो या जल्दी हो, बहुमत की मर्जी को प्रधानता मिलेगी ही। किसी भी अल्पसंख्यक वर्ग या अल्पमत के लिये यह बहुत ही बुरा है कि वह ऐसा रुख अख्तियार करे जिसमें संसार का या बहुमत को प्रतीत हो कि मानो वह यों कह रहा है–''हम आपसे अलग रहना चाहते हैं, हमें आप पर विश्वास नहीं है, हम अपना प्रबंध आप कर लेंगे, हमें आप संरक्षण की व्यवस्था कर दीजिये''। उसके ऐसे रुख का नतीजा यह हो सकता है कि एक आना संरक्षण उसे मिल जाये और पन्द्रह आने से वह हाथ धो बैठे। यह बात बहुमत के हित की दृष्टि से भी खराब है। बहुसंख्यक सम्प्रदाय भले ही यह महसूस करे कि आबादी के ख्याल से और अन्य बातों को देखते हुए वह बहुत ही मजबूत है और इसलिये अल्पमत की इच्छाओं को वह बखूबी दबा सकता है। पर अगर बहुमत ऐसा सोचने लगेगा तो यह उसकी एक बड़ी भूल ही नहीं होगी बल्कि यह कहना चाहिये कि उसने इतिहास से कोई नसीहत हासिल नहीं की। क्योंकि कितना भी बड़ा बहुमत क्यों न हो पर अगर अल्पमतों के साथ अन्याय होता है तो उससे उसे हमेशा तकलीफ मिलती

है और यह बात आखिर में बहुमत के लिये नुकसानदेह साबित होती है। इसलिये इस सम्बन्ध में एक मात्र उपाय यही है और यह अल्पमत और बहुमत दोनों ही के हितों के लिये आवश्यक है कि इनके बीच जो भी दीवार हो जो उन्हें राजनीतिक क्षेत्र में अलग रखती है, उसे ही हटा दिया जाये ताकि वे अपना विकास कर सकें और साथ-साथ चल सकें। इसका मतलब यह नहीं है कि जोर जबर्दस्ती से इस पर अमल कराया जाये। सभी वर्ग अपनी-अपनी विचार प्रणाली अपना सकते हैं, वे अपना गुट बना सकते हैं। पर यह सब, अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक, धर्म और वर्ग आदि के आधार पर नहीं किया जा सकता है। गुट या दल बनाये जा सकते हैं पर अन्य बातों की मिली-जुली बुनियाद पर ताकि लोगों में इस बात की आदत पैदा हो सके कि वस्तुस्थिति पर अपने वर्ग या सम्प्रदाय के दृष्टिकोण से न विचार कर समवाय के दृष्टिकोण से कर सकें। वही पद्धति वांछनीय है जिसे आप किसी भी समय बरत सकते हैं। लोकतंत्रीय व्यवस्था में तो इस पद्धति पर चलना नितान्त आवश्यक है क्योंकि अगर आप ऐसा नहीं करते हैं तो मुसीबतें पैदा होंगी जिसे अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक दोनों को ही भुगतना पड़ेगा पर बहुमत पक्ष के लिये वह मुसीबत और ज्यादा तकलीफदेह होगी।

आज की परिरिस्थति में चाहे आप हिन्दुस्तान की बात लीजिये या दुनिया के किसी और बड़े भूभाग की, सभी जगह हमें इस प्रवृत्ति का विकास करना होगा कि लोग केवल अपने देश के दृष्टिकोण से किसी प्रश्न पर विचार न करें बल्कि यथासम्भव मानव सम्प्रदाय के व्यापक दृष्टिकोण से विचार करें। संकुचित दृष्टिकोण से ही अगर किसी समस्या पर हम सोच विचार करेंगे तो वास्तविकता से हम दूर हो जायेंगे। और जगहों में जो आज बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे हैं जिससे कि दुनिया के हालात में परिवर्तन होते जा रहे हैं उनको अगर हम नहीं समझते हैं और अपने भविष्य को अतीत से सर्वथा पृथक् कर देते हैं; अगर हम अपने अतीतकालीन कुछ विचारों और सन्देहों को पकड़े रहते हैं तो वर्तमान को हम कभी भी न समझ पायेंगे, भविष्य को समझना तो दूर की बात रही, जो अभी निर्माण प्रक्रिया में है। बहुत सी बातें जिनको लेकर हम यहां वाद-विवाद कर रहे हैं ऐसी हैं जिनको हमने अपने अतीत से ही ले रखा है। उनसे हम छुटकारा पा नहीं सकते, हम में से कोई भी उन्हें नहीं छोड़ पाता है क्योंकि हम अपने अतीत के ही एक अंश हैं। पर अगर हम अपने भविष्य को धीरे-धीरे कोई रूपरेखा देना चाहते हैं, उसे गढ़ना चाहते हैं तो इसके लिये यह जरूरी है कि हम अतीत से अपने को अलग करने की कोशिश करें। इसलिये हर दृष्टि से—सिद्धांत की दृष्टि से, विचारधारा की दृष्टि से, राष्ट्रीयता की दृष्टि से, अल्पसंख्यक और बहुसंख्यकों के हित की दृष्टि से और इस दृष्टि से कि हम वर्तमान और भविष्य के स्वरूप को सही-सही समझ सकें—मैं इस प्रस्तुत योजना का अभिनन्दन करता हूं। याद रहे कि भविष्य अतीत से कहीं भिन्न होगा।

मैं तो यहां तक चाहता हूं कि यह योजना इस हद तक कार्यान्वित की जाये कि जो रक्षण रह गये हों वह भी समाप्त कर दिये जायें। किन्तु मैं यह भी कहूंगा कि मैं यह समझता हूं कि देश की जो वर्तमान स्थिति है उसमें ऐसा करना वांछनीय नहीं होगा। मेरा मतलब यह है कि अनुसूचित जातियों के सम्बन्ध में रक्षण हटाना सही नहीं होगा। इस समस्या पर मैं इस दृष्टि से विचार नहीं करता कि अमुक सम्प्रदाय धार्मिक दृष्टि

[माननीय पं. जवारहलाल नेहरू]

से अल्पसंख्यक है इसलिये उसे रक्षण मिलना चाहिये, बल्कि इस दृष्टि से कि देश का अमुक सम्प्रदाय या वर्ग बहुत असहाय और पिछड़ा हुआ है इसलिये उसे रक्षण मिलना चाहिये और मदद मिलनी चाहिये। और फिर मुझे इसकी खुशी है कि रक्षण की व्यवस्था केवल दस साल के लिये ही रखी जा रही है।

इस बात को समझने के लिये कि वर्तमान अतीत से किस प्रकार भिन्न है, मैं अब चाहता हूं कि आप थोड़ी देर के लिये एक खास तरीके पर उस पर विचार करें। ज्यादा नहीं पांच वर्ष पहले की ही परिस्थिति पर विचार कीजिये। उन समस्याओं का ख्याल कीजिये जिनका मुझे और आपको तब सामना करना पड़ता था। उन समस्याओं की एक सूची बनाइये और उन विभिन्न समस्याओं की एक अलग सूची बनाइये जिन पर इस महती सभा को रोज बरोज विचार करना पड़ रहा है। आप देखेंगे कि दोनों सूचियों में जबर्दस्त अन्तर है। आज जो हमारे सामने समस्यायें हैं जिनका हल ढूंढ निकालना है, उनसे यह प्रकट है कि हम कितना बदल गये हैं—यह परिवर्तन चाहे अच्छाई की तरफ हो या बुराई की तरफ। आज दुनिया बदल रही है, हिन्दुस्तान बदल रहा है न केवल राजनीतिक दृष्टि से ही बल्कि और तरह से भी। इन सारे परिवर्तनों की असली कसौटी है यह देखना कि एक समय विशेष पर क्या समस्यायें हमारे सामने आती हैं। आज जो समस्यायें हमारे सामने हैं वह उन समस्याओं से सर्वथा भिन्न हैं जो आज से पांच वर्ष पहले राजनीतिक आर्थिक प्रश्नों अथवा रियासतों के सम्बन्ध में हमारे सामने थीं। जो मैं कह रहा हूं अगर वह सही है तो फिर हमें अपनी समस्याओं का समाधान अब दूसरे ढंग से करना होगा। हां, ऐसा करने में यह जरूरी है कि हम अपने बुनियादी आदर्शों का और अपनी मूल विचारधारा का, जिसने कि हमें अतीत में सदा अनुप्राणित किया है, साथ न छोड़ेंगे, उन्हें पकड़े रहेंगे। पर साथ ही हमें यह भी याद रखना होगा कि अतीतकालीन विचारधाराओं की कई बातों का अब वर्तमान स्थिति में कोई स्थान नहीं रह गया है। पृथक् निर्वाचन, जगहों का आरक्षण और ऐसी ही अन्य बातें जो पहले बहुत ही महत्त्व की थीं, वह इसी श्रेणी में आती हैं। इसलिये मैं समझता हूं कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था को उठा देना न केवल सिद्धांतत: ही अच्छा है, यह केवल सम्बद्ध लोगों के लिये और खास तौर पर अल्पसंख्यकों के लिये ही नहीं लाभप्रद नहीं है बल्कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी देश के लिये और दुनिया के लिये भी एक अच्छा कदम है। इससे जाहिर होता है कि एक असाम्प्रदायिक लोकतंत्र की स्थापना के प्रयास में हम वस्तुत: निष्ठा और सच्चाई से कार्यरत हैं। हमने यहां असाम्प्रदायिक लोकतंत्र का प्रयोग किया है और अन्य बहुत से लोग भी इन शब्दों का प्रयोग करते हैं इस सम्बन्ध में कभी-कभी मैं ऐसा महसूस करता हूं कि इन शब्दों का जरूरत से ज्यादा प्रयोग हो रहा है और ऐसे लोगों द्वारा जो इसके वास्तविक महत्त्व को समझते ही नहीं हैं। यह तो एक ऊंचा आदर्श है जिसकी प्राप्ति के लिये हमें कोशिश करनी चाहिये। पर चाहे हिन्दू हों या मुसलमान या पारसी या ईसाई हों, हम में से कोई भी अपने दिल पर हाथ रखकर यह कहने का साहस नहीं कर सकता है कि उसके दिल में और दिमाग में साम्प्रदायिक भेदभाव की भावना और बुराई सर्वथा है ही नहीं। ऐसा कोई नहीं कह सकता है और अगर ऐसा कहने वाले लोग होंगे भी तो उनकी संख्या बिल्कुल ही नगण्य होगी क्योंकि हम सभी अतीत की ही एक उपज हैं। मुझे खुद ही यह बात सुखद नहीं मालूम होती है कि हम में से कोई दूसरे को यह उपदेश दे कि

हमें आपस में कैसा बर्ताव करना चाहिये या यह कि कोई दल दूसरे दल को, चाहे अल्पसंख्यक दल हो या बहुसंख्यक यह उपदेश दे कि सद्भावना के लिये उसे यों यह करना चाहिये या वह करना चाहिये। अवश्य ही सद्भावना पाने के लिये कुछ न कुछ किया ही जाना चाहिये; यह आवश्यक है। पर सद्भावना, निष्ठा या प्रेम यह ऐसी वस्तु तो नहीं है जो उपदेश द्वारा प्राप्त की जा सके। यह बातें तो विकास पाती हैं, कतिपय परिस्थितियों के कारण, हृदय और मस्तिष्क की भावना के कारण और इस बात का बोध हो जाने के कारण कि अन्ततोगत्वा भलाई किस बात में है।

अब मैं सभा के महत्त्वपूर्ण निर्णय को लेता हूं जिससे हमारे भविष्य पर एक गम्भीर प्रभाव पड़ने जा रहा है। इस मसले के सम्बन्ध में हमारे दिमाग में यह बात साफ-साफ आ जानी चाहिये कि इस दिशा में और आगे बढ़ने के लिये हम में से हर एक को चाहे वह बहुसंख्यक वर्ग का हो या अल्पसंख्यक का, ऐसा करने की कोशिश करनी होगी कि दूसरे दल की या व्यक्ति की सद्भावना प्राप्त हो सके। मैं जो कह रहा हूं वह एक पुराना कथन है। फिर भी मैं इसे इसलिये कह रहा हूं कि यह बात मेरे मन में बैठ गई है कि आपका सम्बन्ध चाहे किसी भी दल से हो, राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार में आपकी उस उदारता, सद्भावना और स्नेह का ही असर पड़ता है जिसको लेकर आप प्रतिपक्षी के पास पहुंचते हैं। अगर आप में यह बातें नहीं हैं तो आपकी बातों का कुछ भी असर उस पर न पड़ेगा और अगर यह बातें आप में हैं तो इनके प्रतिक्रियात्मक प्रभाव के फलस्वरूप प्रतिपक्षी में यह बातें जरूर पैदा हो जायेंगी। अगर आज अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में लघुमात्र भी उदारता और सद्भावना होती तो आज की जो बड़ी-बड़ी अंतर्राष्ट्रीय समस्यायें हैं उनका समाधान निकालना हमारे लिये और आसान हो जाता। अगर हम अपने देश में इन समस्याओं का समाधान इन्हीं भावनाओं से प्रेरित होकर करने का प्रयास करें, तो आपको विश्वास दिलाता हूं, तो हमारे लिये इसमें सफल होना कहीं आसान हो जायेगा। हम सब में भलाई और बुराई दोनों का ही सम्मिश्रण है और प्रतिपक्षी की बुराई को दिखाना बड़ा ही आसान होता है। पर अपनी बुराइयों को ढूंढना आसान नहीं हैं क्यों न हम अपनी बुराइयां ढूंढें? क्यों न हम इस पद्धति का प्रयोग कर देखें जिसे दुनिया के महापुरुषों ने, महात्माओं ने निकाला है जिन्होंने हमेशा प्रतिपक्षी की खूबियों पर ही दृष्टि रखने और इस तरह उसे पास लाने पर जोर दिया है। हमारे राष्ट्रपिता आखिर किस रास्ते पर चलते थे? आखिर वह किस तरह सब तरह के लोगों को, हर दल को और हर व्यक्ति को अपनी ओर खींचते थे और उससे भलाई पा लेते थे? वह हमेशा मनुष्य के गुण की ओर ही दृष्टि रखते थे और शायद यह जानते हुए कि उसमें बुराइयां भी हैं। व्यक्ति या दल के गुणों पर ही वह हमेशा जोर देते थे और उससे उसकी खूबियों का अच्छा से अच्छा उपयोग करवा लेते थे। मैं समझता हूं कि वही एकमात्र रास्ता है जिसके अनुसार हमें व्यवहार करना चाहिये। मुझे इसका पूरा विश्वास हो गया है कि इस रास्ते पर चलने का परिणाम हमारे लिये अच्छा ही होगा। किन्तु जैसा कि मैंने किसी अन्य अवसर पर कहा था मैं सभा को फिर याद दिलाऊंगा कि हमारा यह निर्णय हम सबके लिये धर्म का एक अंग है और विशेष करके बहुसंख्यक सम्प्रदाय के लिये क्योंकि इस निर्णय को स्वीकार करने के बाद उन्हें यह दिखाना होगा कि वह दूसरों के प्रति उदारता और न्याय का बर्ताव कर सकते हैं। हमने इस निर्णय को अपना धर्म माना है और तदनुसार ही हमें अपना आचरण रखना चाहिये।

(श्री तजम्मुल हुसैन बोलने के लिये मंच पर आयें।)

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** एक नियम सम्बन्धी प्रश्न है श्रीमान्। आपने मिस्टर तमीजुद्दीन खां का नाम पुकारा है न कि मिस्टर तजम्मुल हुसैन का।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** (बिहार : मुस्लिम): अच्छा होगा अगर माननीय सदस्य अपना चश्मा बदल डालें। अध्यक्ष महोदय ने तजम्मुल हुसैन को पुकारा और तजम्मुल हुसैन मैं ही हूं।

अध्यक्ष महोदय, स्थानों का रक्षण, चाहे वह किसी रूप में और किसी भी सम्प्रदाय या वर्ग के लिये दिया जाये, सिद्धांत की दृष्टि से बिल्कुल गलत है। इसलिये अपनी तो पक्की राय यह है कि स्थानों के रक्षण की व्यवस्था किसी के लिये भी न होनी चाहिये और मुसलमान होने की हैसियत से कहता हूं कि मुसलमानों के लिये न होनी चाहिये। मुसलमानों के लिये स्थान-रक्षण की कोई व्यवस्था नहीं होनी चाहिये। (*खूब, खूब*) मैं आपको बताना चाहूंगा कि किसी भी सभ्य देश में जहां लोकतंत्रीय आधार संसदात्मक शासन-पद्धति प्रचलित है, स्थानों के रक्षण की कोई भी व्यवस्था आपको नहीं मिलेगी। इंग्लैंड का ही उदाहरण ले लीजिये वहां की लोक सभा पार्लियामेंटों की जननी मानी जाती है। उसमें किसी भी सम्प्रदाय के लिये स्थान-रक्षण की कोई व्यवस्था नहीं हैं इसमें शक नहीं कि विश्वविद्यालयों के लिये वहां जगहें जरूर सुरक्षित रखी जाती थीं पर अब यह व्यवस्था भी उठा दी गई है। आखिर यह व्यवस्था है क्या? यह एक रियायत है, संरक्षण है कमजोरों की रक्षा के लिये। इसके अतिरिक्त यह और कुछ नहीं है। हम मुसलमान कोई रियायत नहीं चाहते, कोई सरंक्षण नहीं चाहते और न किसी प्रकार की रक्षा चाहते हैं। हम कमजोर नहीं हैं। इस रियायत से भलाई की बजाय मुसलमानों को नुकसान ही ज्यादा पहुंचेगा। संरक्षित स्थानों की व्यवस्था का यही मतलब होता है कि निर्वाचक समुदाय की इच्छा के प्रतिकूल आप उन पर किसी प्रतिनिधि को जबर्दस्ती लाद देते हैं। निर्वाचक समूह चाहता हो या न चाहता हो हम जबर्दस्ती उसके प्रतिनिधि बन जाते हैं। हम नहीं चाहते हैं कि जबर्दस्ती एक अनुच्छिक निर्वाचक समूह पर प्रतिनिधि रूप में हम लाद दिये जाये। ऐसा होने से बहुसंख्यक सम्प्रदाय का ऐसा सोचना स्वाभाविक ही है कि हम उनके अधिकारों पर आक्रमण कर रहे हैं हम नहीं चाहते कि वे ऐसा सोचें। हमें अपने लिये जोर लगाकर खुद प्रयास करना चाहिये। पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था हमारे देश के लिये एक अभिशाप रही है और इससे देश को इतना जबर्दस्त नुकसान पहुंचा है जिसका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। इस व्यवस्था को शुरू किया यहां अंग्रेजों ने। संरक्षित स्थानों की व्यवस्था भी इसी पृथक् निर्वाचन पद्धति की एक शाखा है। पृथक् निर्वाचन पद्धति को उठाकर उसकी जगह अब स्थान-रक्षण की व्यवस्था को न दीजिये। इस पद्धति से हमारी तरक्की में बड़ी रुकावट पड़ी है। पृथक् निर्वाचन की पद्धति को तो हमने अब सदा के लिये समाप्त कर दिया है। पर हम संरक्षित स्थानों की व्यवस्था को भी नहीं चाहते हैं। हम चाहते हैं कि यह दोनों ही व्यवस्थायें खत्म कर दी जायें। हम राष्ट्र के साथ घुल-मिलकर एक हो जाना चाहते हैं। हम अपने पांव पर खड़ा होना चाहते हैं। हम किसी का सहारा नहीं लेना चाहते।

हम कमजोर नहीं हैं काफी मजबूत हैं। हम पहले भारतीय हैं तब और कुछ और सदा हम भारतीय रहेंगे। (*खूब, खूब*) भारत हमारा देश है। वतन की हैसियत से हम और दूसरे किसी मुल्क को नहीं जानते हैं। हम भारतीय हैं और सदा रहेंगे। हम भारत की प्रतिष्ठा और गौरव के लिये लड़ेंगे और मर जायेंगे। (*प्रशंसा सूचक ध्वनि*) इस मामले में हम सब एक रहेंगे और हम में कोई भेद आ नहीं सकता। एक रहकर ही हम कायम रह सकेंगे वरना हम गिर जायेंगे। इसलिये अब हम स्थान-रक्षण की व्यवस्था नहीं चाहते हैं। इस व्यवस्था से हमारी एकता जाती रहेगी। बहुसंख्यक सम्प्रदाय के उपस्थित सदस्यों से मैं पूछता हूं "आप हमें अपने पांव पर खड़े होने देंगे या नहीं? आप हमें भारतीय जाति का अंग बने रहने देंगे या नहीं? आप हमें अपना बराबर का साझीदार मानते हैं या नहीं? आप हमें अपने साथ कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ने देंगे या नहीं? आप अपने दुख-सुख में हमें हिस्सा बटाने देंगे या नहीं?" अगर आपका जवाब हां में है तो फिर भगवान् के लिये आप मुसलमानों को संरक्षित स्थान देने की व्यवस्था को अपने दिमाग से हटा दीजिये। हम अपने लिये विधान द्वारा किसी संरक्षण की व्यवस्था नहीं चाहते हैं। जैसा कि मैंने कहा है हम अपने पांव पर खड़ा होना चाहते हैं। अगर हम अपने पांव पर खड़े होंगे तो हम में अपने को लघु समझने की कोई भावना नहीं रहेगी। हम किसी से किसी तरह लघु नहीं हैं। हम में आप में कोई फर्क नहीं है। हम जगत् पिता परमात्मा की पूजा आपकी तरह न करके अवश्य ही एक दूसरे तरह से करते हैं पर केवल इसी आधार पर आप हमें अल्पसंख्यक करार दें यह तो कोई ठीक बात नहीं है। हम अल्पसंख्यक नहीं है। 'अल्पसंख्यक' शब्द अंग्रेजों का निकाला हुआ है। उन्होंने अल्पसंख्यक वर्गों की रचना की थी। अंग्रेज लोग यहां से चले गये और उनके साथ अल्पसंख्यक वर्ग भी चले गये। अब इस शब्द को आप अपने शब्दकोष से हटा दीजिये। (*खूब, खूब*) अब हिन्दुस्तान में कोई अल्पसंख्यक वर्ग नहीं रह गया है। जब तक यहां पृथक् निर्वाचन की पद्धति थी और संरक्षित स्थानों की व्यवस्था वर्गों के लिये थी तब तक ही यहां अल्पसंख्यक समुदायों और बहुसंख्यक समुदाय का अस्तित्व था पर अब सब मिलकर एक समुदाय हो गये हैं।

मैं बहुसंख्यक सम्प्रदाय से अनुरोध करूंगा कि वह अल्पसंख्यकों का अविश्वास न करे। अल्पसंख्यकों ने अब अपने को यहां के अनुसार व्यवस्थित कर लिया है। इसका एक अमली उदाहरण मैं आपके सामने रखता हूं। हैदराबाद सम्बन्धी घटना आपको याद होगी। हैदराबाद के विरुद्ध जब आपने पुलिस कार्रवाई शुरू की उसके पहले वाले रोज बहुसंख्यकों को क्या आशंका थी यह आप जानते हैं। उन्हें यह डर था कि अगर हैदराबाद के खिलाफ कोई कार्रवाई शुरू की गई तो मुसलमान दंगा शुरू कर देंगे। आज करीब डेढ़ साल पहले यहां धारा-सभा में इस सम्बन्ध में बोलने वाला पहला व्यक्ति मैं था। मैंने भारत सरकार की आलोचना की। मुझे अफसोस है कि उस वक्त सरदार पटेल सभा में मौजूद नहीं थे जो इस महकमे के मंत्री थे पर मेरे माननीय मित्र श्री गाडगिल कार्य भार सम्भालने के लिये मौजूद थे। मैंने सरकार के कार्य की आलोचना की। मैंने उन्हें बताया कि यह उनका बिल्कुल गलत ख्याल है कि मुसलमान बगावत कर बैठेंगे। मैंने कहा कि मुसलमान यहां

[मि. तजम्मुल हुसैन]

के अनुसार उचित पथ अपनायेंगे। मेरे शब्द ये थे: ''हैदराबाद के खिलाफ आप अपनी सेना रवाना कर दीजिये। आप दो दिन में समूचे हैदराबाद रियासत पर कब्जा कर लेंगे''। मेरी लम्बी वक्तृता समाप्त होने पर महकमे के तत्कालीन मालिक श्री गाडगिल ने जवाब दिया पर उन्होंने एक शब्द भी हैदराबाद के सम्बन्ध में न कहा और मेरी आलोचना का उन्होंने कोई उत्तर ही नहीं दिया। मैंने उनसे सवाल किया—''आप ने सबकी बातों का तो जवाब दिया पर मेरी बात का जवाब क्यों नहीं दिया? मैं कहता हूं हैदराबाद के विरुद्ध सेना रवाना कर दीजिये। आप दो दिन में समूचे हैदराबाद पर कब्जा कर लेंगे और यहां कोई भी दंगा फिसाद न होगा''। श्री गाडगिल ने इतना ही कहा था–''आप बिल्कुल ठीक कहते हैं; हम ऐसा ही करेंगे''।

मैं सभी अल्पसंख्यकों से अपील करूंगा कि अपने राज्य को पूर्णत: ऐहिक स्वरूप देने में वह बहुसंख्यक समुदाय का हाथ बटायें। अब अपनी बदली हुई स्थिति में, मैं चाहता हूं कि मुल्क का हर नागरिक अपना पूरा विकास कर सके और यही कारण है कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था को मैं अल्पसंख्यकों के लिये घातक समझता हूं। मैं चाहता हूं कि अल्पसंख्यक यह भूल जायें कि राजनैतिक क्षेत्र में वह अल्पसंख्यक हैं। अगर वे अपने को अल्पसंख्यक समझेंगे तो वह बहुसंख्यक समुदाय से सर्वथा पृथक् हो जायेंगे और वैसा होने पर उनमें एक नैराश्यभाव पैदा होगा जो उनको पंगु कर देगा। मैं नहीं चाहता कि हम लोग सदा अल्पसंख्यक ही समझे जायें। मैं अल्पसंख्यकों से यह पूछता हूं कि क्या आप यह ख्वाहिश रखते हैं कि नहीं कि आप भी राष्ट्र के अंग हों और उसके भाग्य निर्माण में आपका भी हाथ हो? अगर आप यह ख्वाहिश रखते हैं तो अपने को बहुसंख्यक समुदाय से अलग करके इसे आप नहीं पूरा कर सकते हैं। अगर अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि धारा सभाओं में संरक्षित स्थानों की व्यवस्था के आधार पर चुनकर आ जाते हैं तो वहां देश के कामों के बारे में वह अपनी कारगर आवाज नहीं उठा सकते हैं। वह हुकूमत तो कभी बना ही नहीं सकते। इंग्लैंड का प्रख्यात प्रधानमंत्री डिसरायले कभी वहां का प्रधानमंत्री न बन पाता अगर वहां यहूदियों के लिये संरक्षित स्थानों की व्यवस्था रहती। मैं चाहता हूं कि भारतीय लोकतंत्र में अल्पसंख्यकों को सम्मान का स्थान प्राप्त हो। राष्ट्र के हितों को हम पहले देखेंगे और वर्ग के हितों को बाद में। अल्पसंख्यकों को शीघ्र ही वह दिन लाना चाहिये जबकि वह व्यवस्थापिका सभाओं में भारतीय जाति के प्रतिनिधि रूप में पहुंच सकें न कि किसी वर्ग या सम्प्रदाय का बिल्ला लगाकर उन्हें वहां पहुंचना हो।

अब अगर आपको अनुमति हो श्रीमान्, तो मैं चन्द शब्द उन वक्तृताओं के सम्बन्ध में कहूंगा जो सरदार पटेल के प्रस्ताव के खिलाफ यहां दी गई हैं। मद्रास से आये श्री मुहम्मद इस्माइल के भाषण को पहले लेता हूं। आप पृथक् निर्वाचन चाहते हैं मैं उनसे अपील करूंगा कि भिक्षा के रूप में वह कुछ न मांगे। पृथक् निर्वाचन की मांग भिक्षा की ही एक मांग है। मैं उनसे कहूंगा कि इसका परिणाम बड़ा ही भयावह होगा। बहुसंख्यक सम्प्रदाय फिर आपका कभी विश्वास न करेगा। फिर आप कभी भी किसी बात के लिये अपनी जोरदार आवाज नहीं उठा सकेंगे। आप बहुसंख्यक वर्ग से सर्वथा अलग से हो जायेंगे और आपके साथ बाहर वालों का सा सलूक बरता जायेगा और आपकी दशा वही हो

जायेगी जो अनुसूचित जातियों की है। आप अनुसूचित जातियों की तरह गरीब नहीं हैं। आप कमजोर नहीं हैं, अशिक्षित नहीं हैं, और असंस्कृत नहीं हैं। आप सदा अपने पांव पर खड़े हो सकते हैं। आपके सम्प्रदाय ने बड़े-बड़े रत्न पैदा किये हैं। इसलिये सरंक्षण की मांग आप न कीजिये। आपको अपने ऊपर विश्वास होना चाहिये। आपको सदा अपनी बात के लिये सदा प्रयास द्वारा सफलता की कोशिश करनी चाहिये। आपको चाहिये कि सीधी तरह चुनाव लड़कर आप धारा सभाओं में आयें। अब जमाना बदल गया है। जमाने के मुताबिक आप अपने को व्यवस्थित कीजिये। आपने कल अपनी वक्तृता में यह स्वीकार किया है कि वातावरण अब अच्छा हो गया है। मैं आपसे सर्वथा सहमत हूं कि वातावरण अब अच्छा हो गया है। मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि वातावरण को खराब मत कीजिये। इसको और अच्छा बनाइये पर यह न कीजिये कि पृथक् निर्वाचन का आग्रह करके इसे बिगाड़िये। अगर आप पृथक् निर्वाचन के लिये आग्रह करेंगे तो वातावरण जरूर खराब होगा। अगर पृथक् निर्वाचन की आपकी मांग पूरी कर दी जाती है तो वातावरण पहले जैसा ही दूषित हो जायेगा। इस्माइल साहब, अपने मन में यही सोचिये कि आप भारतीय हैं और भारतीय रहेंगे और फिर देखिये कि पृथक् निर्वाचन का सारा ख्याल आपके दिमाग से काफूर हो जायेगा। फिर कभी आप उसका ख्याल भी न करेंगे।

मैं आपको बताऊं श्रीमान्, कि खंड 292 के सम्बन्ध में मैंने संशोधन भेजा कि इस खंड को हटा देना चाहिये और संरक्षित स्थानों की कोई व्यवसथा न होनी चाहिये तो मेरे कई मुस्लिम दोस्तों ने जो संरक्षित जगहों की व्यवस्था के पक्ष में थे मुझसे बोले—''यह नहीं समझते हो कि हिन्दुओं की मनोवृत्ति इस समय ऐसी है कि अगर संरक्षित स्थानों की व्यवस्था हमारे लिये न रखी गई तो हम चुनाव में कभी सफल ही न होंगे।'' एक माननीय सदस्य ने, जिनके लिये मेरे मन में बड़ी श्रद्धा है, मुझसे यों कहा–''हमारी हालत देखिये। हम सदा कांग्रेस के साथ रहे, जेल गये और सभी मुसीबतें झेलीं। इसमें शक नहीं कि कांग्रेस हमें टिकट जरूर देगी। इसी तरह सोसलिस्ट और कम्युनिष्ट पार्टी की ओर से भी कई मुसलमानों को टिकट मिलेंगे। पर वोट तो पाना है निर्वाचकों से। उनसे कैसे वोट पाइयेगा? वे हम लोगों को कभी भी न चुनेंगे। इसलिये अगर संरक्षित स्थानों की व्यवस्था हमारे लिये नहीं रखी जाती है तो हिन्दुओं की मनोवृत्ति के कारण कोई भी मुसलमान चुनाव में कभी न आ सकेगा।'' मैंने उनसे यह कहा कि मैं उनकी इस बात से सहमत हूं कि हिन्दुओं की मनोवृत्ति फिलहाल वैसी ही है जैसा कि आप बयान कर रहे हैं इस्माइल साहब से भी कहता हूं कि जब तक संरक्षित स्थानों की या पृथक् निर्वाचन की पद्धति कायम रहेगी हिन्दुओं की यह मनोवृत्ति कभी नहीं बदल सकती है। आप इन दोनों बातों को उठा दीजिये और उनकी मनोवृत्ति अपने आप बदल जायेगी। मैं इस विस्तार में नहीं जाऊंगा कि इस मनोवृत्ति का इतिहास क्या है? इसके लिये कौन कितना दोषी है मैं इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहूंगा क्योंकि इन सब विस्तार की बातों में जाने में समय बहुत लगेगा और मुझे वक्त दिया गया है बहुत थोड़ा, जिसमें ही मैं अपनी बात खत्म कर देना चाहता हूं। आप सब लोग यह जानते हैं कि हिन्दुओं में यह मनोवृत्ति कैसे उपजी। हमें इसमें रहना है इसलिये उनकी इस मनोदशा को बदलना हमारा ही फर्ज है और ऐसा करने का एकमात्र उपाय यह है कि हम अपने को भारतीय लोकतंत्र का अंग बना दें। आपको यह कहना चाहिये कि हिन्दू अब आपके शत्रु नहीं बन्धु हैं और अवश्य ही वे हमारे बन्धु हो जायेंगे।

[मि. तजम्मुल हुसैन]

अब मैं श्री लारी की बातों की ओर आता हूं। वे पृथक् निर्वाचन नहीं चाहते हैं और न स्थान रक्षण की व्यवस्था ही वे पसन्द करते हैं। उन्होंने दोनों ही पद्धतियों की निन्दा की है और उन्हें खतरनाक बतलाया है। यहां मैं उनसे सर्वथा सहमत हूं। उन्होंने हमेशा ही पृथक् निर्वाचन की और स्थान-रक्षण की निन्दा की है, देश विभाजन की भी निन्दा की है। उनका यह काम बिल्कुल सही है पर वे सामूहिक मतदान पद्धति की भी सिफारिश करते हैं। एकलसंक्राम्य मत के आधार पर अनुपाती प्रतिनिधित्व की प्रणाली को आप चालू करना चाहते हैं। हमारे माननीय मित्र प्रो. सक्सेना ने हमें अभी बताया है कि यह सामूहिक मतदान की पद्धति कितनी जटिल है और इसमें हिसाब-किताब की कितनी पेचीदगी है। मैं इसकी जटिलता के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहने जा रहा हूं। मैं केवल एक ही बात कहना चाहता हूं और वह यह कि श्री लारी यह चाहते हैं कि सामने वाले दरवाजे से नहीं तो पिछले दरवाजे से ही असेम्बली में वह घुस जायें। उदाहरण के तौर पर मैं आपको यह समझाऊंगा। फर्ज कीजिये एक निर्वाचन क्षेत्र में लोक सभा के लिये चार जगहें हैं पर उम्मीदवार खड़े हैं पांच। इनमें कोई न कोई चार चुने जायेंगे और एक को हारना होगा। इन पांचों उम्मीदवारों में चार हिन्दू हैं और एक मुसलमान। अब हिन्दू वोटरों के वोट उनके उम्मीदवारों में बंट जायेंगे और उनके तीन चुन लिये जायेंगे। मुस्लिम उम्मीदवार मुसलमानों के वोट पर आ जायेगा। इस प्रणाली में होगा यही कि फिर ही पृथक् निर्वाचन और स्थान-रक्षण की बात चालू हो जायेगी। मैं अपने मित्र श्री लारी से कहूंगा कि यह व्यवस्था तो पृथक् निर्वाचन से भी खराब है क्योंकि इसमें साफगोई नहीं है और लुकाछिपी बहुत है। मिस्टर मुहम्मद इस्माइल की बात तो मैं समझ सकता हूं। वह साफ-साफ कहते हैं कि पृथक् निर्वाचन उनके ख्याल से जरूरी है इसलिये वे उसकी मांग करते हैं। पर श्री लारी का जो तरीका है वह मेरी समझ में नहीं आता क्योंकि उसमें साफ-साफ न कह अपनी मांग को घुमा फिरा कर कहा गया है। मुझे विश्वास है कि मुसलमान ऐसे नापाक और टेढ़े रास्ते को कभी न पसन्द करते हैं। वह साफगोई पसन्द करते हैं और सीधे लड़ना पसन्द करते हैं लुकछिप कर नहीं। बावजूद इसके कि मिस्टर लारी ने हमेशा पाकिस्तान का खुले तौर पर विरोध किया है, पृथक् निर्वाचन और स्थान-रक्षण की व्यवस्था का विरोध किया है, आप में लाघव भावना जरूर वर्तमान है। मैं उनसे कहूंगा कि इस ख्याल को—इस डर को—हटा दीजिये कि आप दूसरे से लघु हैं और मुल्क की हालत अच्छाई की ओर बदल जायेगी।

अन्त में मैं अपने आदरणीय मित्र, आसाम के भूतपूर्व प्रधानमंत्री सर मुहम्मद सादुल्ला के भाषण की ओर आता हूं जिनके लिये मेरे मन में बड़ा सम्मान भाव है। आपने यहां यह शिकायत की है कि अल्पसंख्यकों तथा मूलाधिकारों के सम्बन्ध में जो परामर्शदातृ-समिति बनाई गई थी उसके अधिकांश मुस्लिम सदस्यों ने इस प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया था कि मुसलमानों के लिये स्थान-रक्षण की व्यवस्था न होनी चाहिये। मैं कह चुका हूं कि आसाम के भूतपूर्व प्रधानमंत्री के लिये मेरे मन में बड़ा सम्मान-भाव है पर उनकी इस बात से शायद मैं सहमत न हो सकूंगा। मैंने उस समिति में अपना यह प्रस्ताव भेजा था कि मुसलमानों के लिये स्थान-रक्षण की व्यवस्था न होनी चाहिये। मेरे इस प्रस्ताव

पर माननीय सरदार पटेल के सभापतित्व में वहां विचार किया गया था। मैंने अपने प्रस्ताव पर भाषण दिया और बेगम ऐज़ाज रसूल ने उसका समर्थन किया था। मौलाना आजाद भी उपस्थित थे। उन्होंने मेरा विरोध नहीं किया। केवल एकमात्र सदस्य जिन्होंने मेरे प्रस्ताव का विरोध किया था वे थे बिहार के श्री जाफर इमाम साहब। उस समिति में भी मेरे प्रस्ताव के पक्ष में मुस्लिम सदस्यों का बहुमत था। केवल एक सदस्य विरोधी थे और तीन सदस्य—बेगम ऐजाज रसूल, मौलाना आजाद और मैं—उसके पक्ष में थे। उस बैठक में इस पर कुछ निश्चय न हो सका और बैठक अनिश्चित अवधि के लिये स्थगित रखी गई। इस महीने की 11वीं तारीख को फिर उसकी बैठक हुई। मैं इसमें शामिल होना चाहता था खास कर इसलिये कि वहां मेरा प्रस्ताव था। मैं उसे फिर पेश करना चाहता था। पर मुझे मीटिंग की सूचना ही नहीं मिली। सूचना दिल्ली में ही पड़ी रह गई, मेरे पास पहुंची ही नहीं। अगर उसकी सूचना मुझे मिली होती तो मैं जरूर बैठक में शामिल होता। दिल्ली आने पर मुझे मालूम हुआ कि मीटिंग 11 तारीख को हुई थी। खैर, मुझे यह जान कर खुशी हुई कि मेरे प्रस्ताव का जो सार था वह मंजूर कर लिया क्योंकि मैं गैर हाजिर था। मैंने समाचार पत्रों में एक वक्तव्य दिया कि मैं क्यों बैठक में शामिल न हो सका जो सभी पत्रों में छपा था। सर सादुल्ला भी उस बैठक में शामिल न हो सके। उसमें अपने चार सदस्य मौजूद थे, मौलाना आजाद, मौलाना हिफजुर्रहमान, बेगम ऐजाज रसूल और श्री जाफर इमाम। मौलाना आजाद और मौलाना हिफरुर्जहमान ने मेरे प्रस्ताव का विरोध नहीं किया था। आखिर इस सभा में हर सदस्य तो बोलता नहीं है। अगर किसी को विरोध करना होता है वह विरोध में अपना मत दे देता है। अगर वह बोलता नहीं है और अपनी राय प्रस्ताव के पक्ष में देता है तो इसका मतलब यह है कि वह उसके पक्ष में है। मौलाना आजाद तो खुद वहां मौजद थे। अगर वह प्रस्ताव का विरोध करना चाहते तो वह कर सकते थे। दो मौलानाओं ने तो कुछ कहा ही नहीं और बेगम ऐजाज रसूल ने मेरे प्रस्ताव के सारांश का समर्थन ही किया। प्रस्ताव पेश किया था मेरे माननीय मित्र डा. मुखर्जी ने। उनका प्रस्ताव भी सार में मेरे प्रस्ताव से सर्वथा मिलता जुलता था। बेगम ऐजाज रसूल ने उसका समर्थन किया था और मेरे मित्र जाफर इमाम साहब ने उसका विरोध किया था। अगर दोनों मौलाना मेरे प्रस्ताव के खिलाफ होते तो वे जाफर इमाम के साथ मत देते। पर वे दोनों साहब कुछ नहीं बोले। प्रस्ताव पर मत लिया गया और बहुमत उसके पक्ष में था। मैं समझता हूं कि माननीय सरदार पटेल ने यह कहा था कि मुसलमान उसके पक्ष में हैं यद्यपि दोनों मौलाना इस पर चुप थे। इसका मतलब ही यह हुआ कि दोनों साहब मेरे पक्ष में थे। इस तरह प्रस्ताव के पक्ष में तीन मत और विरोध में एक ही मत था।

जहां तक मेरा ख्याल है—मुझे ठीक-ठीक तो याद नहीं है—उस समिति में सात मुस्लिम सदस्य थे उनमें से केवल दो मेरे प्रस्ताव के खिलाफ हैं और पांच पक्ष में हैं सर सादुल्ला और जाफर इमाम साहब ये दोनों मेरे खिलाफ हैं और मौलाना आजाद, मौलाना हिफजुर्रहमान, बेगम ऐजाज रसूल, श्री हुसैन भाई लालजी और मैं ये पांच इसके पक्ष में है। श्री हुसैन भाई लालजी के विचारों से लोग अच्छी तरह परिचित हैं। उन्होंने मिस्टर जिन्ना का विरोध किया था। मैं उनके विचारों से परिचित हूं। उन्होंने मुझे एक बार लिखा

[मि. तजम्मुल हुसैन]

भी था कि भगवान के लिये जैसे भी हो स्थान-रक्षण की व्यवस्था को हटाने के लिये जरूर कुछ कीजिये। इसलिये मैं कहता हूं कि मेरे पक्ष में जबरर्दस्त बहुमत था। एक और साहब भी उस समिति में थे और वे थे श्री सैयद अली जहीर। वे आजकल एक राजदूत के रूप में काम कर रहे हैं। मैं उनके विचारों को जानता हूं। वे भी मेरे ही विचार के व्यक्ति हैं।

मेरे आदरणीय मित्र श्री सादुल्ला साहब ने जो दूसरी बात इस बारे में कही है वह यह है कि इस प्रस्ताव पर यहां मुस्लिम सदस्यों की राय ही क्यों न ले ली जाये। यह उन्होंने चुनौती दी है। मैं उनकी इस चुनौती को मंजूर करता हूं। मैं अपने माननीय मित्र को यह बता दूं कि जब मुस्लिम सदस्य पहली मर्तबा दिल्ली पहुंचे तो उनकी एक बैठक वेस्टर्न कोर्ट में हुई थी जिसमें सभी सदस्य मौजूद थे। पहले बोलने के लिये मैं ही खड़ा हुआ और मैंने कहा कि संरक्षित स्थानों की व्यवस्था न रहनी चाहिये। मैंने अपना प्रस्ताव भी विधान-परिषद् में भेजा था जब आपकी ही अध्यक्षता में अधिवेशन चल रहा था। मुझे खेद है कि एक को छोड़कर किसी सदस्य ने मेरा साथ नहीं दिया। मैंने देखा कि मुसलमान स्थान-रक्षण को व्यवस्था चाहते हैं और इसलिये मैंने अपना प्रस्ताव पेश नहीं किया। वह पहली मीटिंग भी जिसमें मुस्लिम सदस्य मेरे खिलाफ थे। दूसरी बैठक नवाब मुहम्मद इस्माइल के मकान पर नं. 18 विन्डसर प्लेस में हुई थी, जिसके बारे में उन्होंने आपसे कहा था। उस बैठक में जबर्दस्त बहुमत मेरे प्रस्ताव के पक्ष में था। वही मुस्लिम सदस्य जो वेस्टर्न कोर्ट वाली बैठक में शरीक थे, यहां भी मौजूद थे और वहां जबर्दस्त बहुमत से यह तय पाया कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था न होनी चाहिये। देखिये कैसा परिवर्तन हुआ। एकमात्र सदस्य जिन्होंने मेरे प्रस्ताव का वहां विरोध किया वे थे यही मेरे माननीय मित्र श्री सादुल्ला साहब। आपका यही ख्याल है कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था आवश्यक है। चूंकि आप इस व्यवस्था को ठीक समझते हैं इसीलिये आप इसे आवश्यक बताते हैं। मैं आपके मत का आदर करता हूं और यह आशा करता हूं कि आप भी मेरे मत का आदर ही करेंगे। आपने कहा था कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था जरूर होनी चाहिये। पर आपने यह भी कहा था— ''व्यक्तिगत रूप से तो मैं स्थान-रक्षण की व्यवस्था के पक्ष में नहीं हूं पर इसे रखने की बात इसलिये कहता हूं कि मुसलमान लोग इसे चाहते हैं।'' विनम्रतापूर्वक मैं उनसे कहूंगा कि उनका यह कहना गलत है। मुसलमान इसे नहीं चाहते हैं। एकमात्र सादुल्ला साहब ने ही मेरे प्रस्ताव का विरोध किया था। मद्रास का दल भी वहां मौजूद था। उनका अपना एक अलग दल है। मैं उनकी बात को समझ पाता हूं। वह हमेशा से ही कहते रहे हैं कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था न रहनी चाहिये पर पृथक् निर्वाचन की पद्धति जरूर रहनी चाहिये। वेस्टर्न कोर्ट वाली मीटिंग में उन्होंने कहा था कि पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था होनी चाहिये। यही बात उन्होंने, नवाब मुहम्मद इस्माइल के स्थान पर जो बैठक हुई उसमें कही और यही बात वे यहां भी कह रहे हैं वे जो चाहें रखें पर यह बात जबर्दस्त बहुमत से पास हो चुकी है कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था न रहनी चाहिये। हम सब उस बैठक में मौजूद थे। उसके बाद मैंने अपना इस आशय का संशोधन भेजा था कि यह सारा का सारा खंड हटा दिया जाये या फिर मुसलमानों के लिये स्थान-रक्षण की व्यवस्था न रखी जाये।

***अध्यक्ष:** आपका वक्त खत्म हो चुका है।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** जल्द ही अपनी बात समाप्त किये देता हूं। मेरा प्रस्ताव था कि बिल्कुल साफ-साफ, सीधी-सीधी संयुक्त निर्वाचन की व्यवस्था रखी जाये। श्री सादुल्ला साहब का कहना है कि जाती तौर पर वे खुद पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था को पसंद नहीं करते पर चूंकि मुसलमान इसे चाहते हैं इसलिये वे इसको रखने की बात कह रहे हैं। मैं उनको विश्वास दिलाता हूं उनका यह ख्याल गलत है। मुसलमान इसे नहीं चाहते हैं।

***अध्यक्षः** माननीय सदस्य कृपया घड़ी की ओर देखें। उन्होंने बहुत समय ले लिया है।

***मि. तजम्मुल हुसैनः** मुझे यह सब बातें इसलिये कहनी पड़ रही हैं कि यहां मुझे चुनौती दी गई है। एक मिनट में मैं अपनी बात खत्म किये देता हूं। मेरे पास सारे सदस्यों की सूची मौजूद है। इसमें कुल 33 मुस्लिम सदस्य हैं। जिनमें 31 तो प्रांतों से आये हैं और दो हैं रियासतों के। इनमें चार सदस्य तो मद्रास के हैं। मैं यह भी बता दूं कि सदस्यों में बहुत से ऐसे हैं जो बराबर ही अनुपस्थित रहे। क्योंकि ये लोग पाकिस्तान चले गये हैं। खासतौर पर पंजाब के सभी सदस्य पाकिस्तान चले गये और बंगाल के पांच सदस्यों में से तीन चले गये हैं बाकी में, मद्रास के चार सदस्य हैं वह पृथक् निर्वाचन की व्यवस्था चाहते हैं। विधान-परिषद् के रजिस्टर पर कुल मुस्लिम सदस्य 23 हैं। इनमें से, जैसा मैं कह चुका हूं, चार पृथक् निर्वाचन के पक्ष में है, चार—2 बिहार के और 2 आसाम के—स्थान-रक्षण की व्यवस्था के पक्ष में है। एक साहब सामूहिक मतदान की पद्धति के पक्ष में हैं और एक सदस्य यानी श्री हुसैन इमाम की राय मालूम नहीं हो पाई है। मैंने उनसे इस प्रश्न पर बातचीत की थी पर उनकी राय नहीं जान पाया। इस तरह हम देखते हैं कि विधान-परिषद् के रजिस्टर पर जिन 23 सदस्यों के नाम हैं उनमें चार पृथक् निर्वाचन चाहते हैं, चार स्थान-रक्षण की व्यवस्था के पक्ष में हैं, एक सामूहिक मतदान की पद्धति के पक्ष में है और एक सदस्य की राय मालूम ही नहीं हो पाई है। बचे हुए 13 सदस्य संयुक्त निर्वाचन की व्यवस्था चाहते हैं जिसमें संरक्षित जगहों की व्यवस्था को कोई भी स्थान न दिया गया हो। अगर आप उन सदस्यों की गिनती करें जो मेरे साथ नहीं हैं तो उनकी संख्या होती है कुल 10 और हम है 13 और अगर मि. लारी को भी हम अपने साथ जोड़ लें क्योंकि वे भी स्थान-रक्षण या पृथक् निर्वाचक के पक्ष में नहीं है तो हमारी संख्या हो जाती है 14। आज उपस्थित सदस्यों की कुल संख्या है 15 और इनमें चार स्थान-रक्षण की व्यवस्था चाहते हैं और तीन पृथक निर्वाचन की। जो आठ सदस्य बच गये वे मेरे साथ हैं। इस तरह ही हमारा ही बहुमत है।

अपनी बात अब मैं खत्म किये देता हूं श्रीमान्। मैं बहुसंख्यक सम्प्रदाय से आग्रह करूंगा कि वह स्थान-रक्षण की व्यवस्था को मुसलमानों पर जबर्दस्ती न लादें। अगर आपकी धारणा है और यह विश्वास है कि यह व्यवस्था गलत है तो भगवान् के लिये आप हमारे लिये स्थान-रक्षण की व्यवस्था न कीजिये। आप जानते थे कि पृथक् निर्वाचन की पद्धति मुसलमानों

[मि. तजम्मुल हुसैन]

के लिए और सारे देश के लिये एक गलत पद्धति थी और इसलिये आपने उसकी बावत मुसलमानों से कभी राय मश्विरा नहीं किया। सादुल्ला साहब ने भी यह एतराज नहीं उठाया कि मुसलमानों से इस संबंध में राय मश्विरा नहीं किया गया और उन्होंने इसे उठाने की बात स्वीकार की। यह क्यों? इसीलिये कि लोगों का यही विश्वास था कि यह व्यवस्था देश के लिये गलत चीज है। हम आपसे कहते हैं कि आप हमें अल्पसंख्यक न बनाइये, हमें अपना बराबर का साझीदार बनाइये। फिर देखिये कि यहां न कोई बहुसंख्यक रह जायेगा और न अल्पसंख्यक।

अब अंत में मैं एक बात कहने की अनुमति चाहता हूं और वह एक बड़ी ही गंभीर बात है जिसे मैंने सभा भवन में अभी तक नहीं कहा है। पर चूंकि मैं यह महसूस करता हूं कि कुछ लोग यहां ऐसे हैं जो मेरी बात के सख्त खिलाफ हैं, इसलिये मैं चेतावनी दे रहा हूं। जैसा कि आपको मालूम है श्रीमान्, मुसलमानों में दो फिरके हैं। एक सियों का दूसरा सुन्नियों का। प्रांतों से जो यहां 31 मुस्लिम सदस्य आये हैं उनमें एक मात्र शिया मैं ही हूं। रियासतों से आये दो प्रतिनिधियों में 1 साहब शिया है और दूसरे सुन्नी। मैं आपके यह बता देना चाहूंगा कि शियों ने पृथक् निर्वाचन का और स्थान-रक्षण की व्यवस्था का हमेशा ही विरोध किया है। वे सदा राष्ट्रीयतावादी रहे हैं। मैं दस साल बिहार प्रांतीय शिया सम्मेलन का सभापति रहा हूं और हम लोगों ने हमेशा यही कहा है कि हम शुद्धतः संयुक्त निर्वाचन की व्यवस्था चाहते हैं। अभी हाल में, सन् 1948 ई. की 31वीं दिसम्बर को अखिल भारतीय शिया सम्मेलन का 35वां अधिवेशन संयुक्तप्रांत के मुजफ्फर नगर में हुआ था, जिसके प्रधान थे सर सुलतान अहमद जिन्हें सभी जानते हैं। वहां सर्वसम्मति से एक इस आशय का प्रस्ताव पास हुआ था कि पृथक् निर्वाचन और स्थान-रक्षण की पद्धति न रहनी चाहिये। सम्मेलन में भाग लेने के लिये मैं यहां से गया था। सम्मेलन के सभापति के भाषण का एक अंश मैं पढ़ कर सुनाता हूं।

''विधान के मसौदे में यह प्रावधान किया गया है कि अल्पसंख्यकों के लिये स्थान-रक्षण की व्यवस्था अभी दस वर्ष तक चालू रखी जाये। यह प्रावधान इसलिये किया गया है कि अल्पसंख्यकों को उनकी असुविधात्मक स्थिति में कुछ सहूलियत मिल सके। सहिष्णुता और बन्धुत्व की भावना से प्रेरित होकर तथा अल्पसंख्यकों के अधिकारों के संरक्षण के लिये जो प्रचलित सिद्धांत हैं उनका अनुगमन करते हुए, उनके लिये यह व्यवस्था की जा रही है। इस दृष्टि से तो यह प्रावधान बिल्कुल सही है। पर मुझे ऐसा लगता है कि इस प्रावधान का परिणाम यह होगा कि बहुसंख्यक समुदाय और अल्पसंख्यकों में पार्थक्य भाव की जो बीमारी है उसकी अवधि बढ़ जायेंगी और उसके कीटाणु दस साल तक देश में जहर पैदा करते रहेंगे जिसका असर कालांतर तक बना रहेगा। स्थान-रक्षण की व्यवस्था तो दीर्घकालीन दुर्भावों को धीरे धीरे आसानी से दूर करने का एक उपाय मात्र है। यह ऐसा उपचार है जिसके द्वारा किसी रोग को इस तरह धीरे-धीरे दूर कर दिया जाये कि जहां तक हो सके रोगी को उपचार का आभास भी न मिल सके और किसी को यह ख्याल पैदा न हो सके कि बहुसंख्यक वर्ग में अल्पसंख्यकों के प्रति सहानुभूति का अभाव है। मैं यह कहता हूं कि हम यह साहस क्यों न करें कि पृथक् निर्वाचन की भयंकर

दूषित पद्धति के साथ ही हम स्थान-रक्षण की पद्धति को भी उठा दें। पार्थक्य भाव पैदा करने वाली कोई भी व्यवस्था आप न रहने दीजिये चाहे वह कितनी ही निर्दोष क्यों न हो। हमें चाहिये कि हम सभी देशस्थ लोग बन्धुत्व भाव और विश्वास सूत्र से परस्पर आबद्ध होकर एक हो जायें और ऐसी कोई भी बात न बाकी रहने दें जिसने हमारे पार्थक्य का, हमारे पारस्परिक भेदभाव का कोई आभास मिलता हो। जिसके कारण अतीत में हम परस्पर अमित्र बने रहें और एक दूसरे से मैत्री करने में सदा विमुख रहें। एक महती जाति के इस अलोक मंडित प्रभात में हमें अब हमेशा के लिये विनिद्रित हो जाना चाहिये और तब हमारे नवार्जित स्वातंत्र्य का ऐतिहासिक वातावरण और हमारा बन्धुत्व भाव अवश्य हमें इस बात का साहस प्रदान करेगा कि सहयोगिता के सिद्धांत को हम अपने जातीय जीवन के लिये धर्मवत अपना लें।

पार्थक्य के इस चिन्ह को हमेशा के लिये कायम न रहने देने का एक और भी कारण है। उससे दूसरे अल्पसंख्यकों को संरक्षण की मांग के लिये प्रोत्साहन मिलता है। फिर अल्पसंख्यक वर्गों के भीतर जो अल्पसंख्यक हैं उन्हें भी अपने लिये संरक्षण पाने का हक हो जाता है। इस तरह पार्थक्य भावना को दूर करने में कोई मदद मिलती तो दूर रही, इस व्यवस्था से पार्थक्य भावना और बढ़ेगी जिसका नतीजा यह होगा कि हमारी धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक जटिलतायें और भी गहन हो जायेंगी। संरक्षित स्थानों की व्यवस्था रखने का लाजिमी नतीजा यह होगा कि साम्प्रदायिक एवं राजनैतिक आधार पर काम करने वाले एक संगठन को कायम रखना ही होगा। हमारे लिये जरूरी यह है कि जैसे भी हो ऐसे संगठनों को हर्गिज न पनपने दें।''

*__अध्यक्षः__ आपने जितना पढ़कर सुनाया है वह काफी है।

*__मि. तजम्मुल हुसैनः__ सिर्फ एक मिनट का समय और लूंगा श्रीमान्। मुझे कुछ बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात कहनी है।

*__अध्यक्षः__ नहीं, अब और समय नहीं दिया जायेगा।

*__श्री एल.एस. भाटकर__ (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, अध्यक्ष महोदय, आज के शुभ अवसर पर मैं भी अपने विचार इस असेम्बली के सामने रखना चाहता हूं। कल जो रिपोर्ट माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल साहब ने असेम्बली के सामने पेश की और जो प्रस्ताव रखा है उसका मैं पूर्णतया स्वागत करता हूं। इस भारतवर्ष का यह बड़ा सौभाग्य है कि उसके अन्दर सरदार साहब जैसे पूजनीय और धुरंधर नेता मौजूद हैं और इस देश के सामने जो बड़ी-बड़ी समस्यायें आई उनकी वे पूरी तौर से हल करके यश प्राप्त कर सके। अगर कुछ दिन पूर्व किसी से भी पूछा जाता कि क्या हिन्दुस्तान में जातीय और स्वतंत्र मतदान बंद हो जायेगा तो कोई भी यही जवाब देता कि यह बात बिल्कुल असम्भव है। ऐसी ही असम्भव बात सरदार साहब ने करके बतलाई, जिसके लिये जितने धन्यवाद उनको भारतवासी लोग दें उतने कम ही हैं।

[श्री एल.एस. भाटकर]

इस घटना समिति ने हिंदुस्तान एक सैक्यूलर अथवा अजातीय स्टेट होगा, ऐसी घोषणा कई बार कर दी है। इस उच्च ध्येय को सामने रखते हुए अगर इस देश की घटना में जातीय मतदान संघ और जातीय मतदान जारी रहता, तो यह घटना समिति अपने उद्देश्यों को पूरी तौर से प्राप्त नहीं कर सकी, ऐसा दोष इस घटना समिति को कबूल करना पड़ता। मगर सरदार साहब ने जो भारतवासियों का विश्वास संपादन किया, उसका यह फल है कि जातीय मतदान संघ को घटना में से पूर्णतया निकालकर सिर्फ शिड्यूलड कास्ट के लोगों के लिये दस वर्ष तक रिजर्व सीट रखी गई है।

मैं खुले दिल से यह कहने के लिये तैयार हूं कि, अगर यह भी चीज हम इस घटना से निकाल सकते थे, तो अच्छा ही होता। मगर शिड्यूल कास्ट के लोगों की गरीबी, उनमें शिक्षा का अभाव और लोगों के सामाजिक ख्यालों से उनको समाज में नीचा स्थान देने की प्रणाली, जो कि अभी सर्वत्र दिखाई देती है, इसको देखकर शिड्यूल कास्ट के लोगों को घटना में कोई विशेष साहाय्य न देना, न्याय की बात नहीं हो सकती थी, क्योंकि उनकी गिरी हालत को वह स्वयं नहीं मिटा सके। मुझे यह आशा है कि आते हुए दस साल में सबके साहाय्य से हरिजन वर्ग बहुत कुछ प्रगति कर सकेगा और ऐसा होने पर जो विशेष साहाय्य हम आज चाहते हैं, उसकी आवश्यकता नहीं रहेगी। मगर यह सब होने के लिये हर चीज में दीगर लोगों का सहकार्य हमें मिलना चाहिये। यह प्रस्ताव यहां लाकर सरदार साहब ने महात्मा गांधी जी की हमें याद दिलाई है। इस प्रस्ताव के अनुसार जो घटना (विधान) बनेगी, उनका सच्चा आधार महात्मा जी का किया हुआ पूना पैक्ट है।

आज वक्त बहुत कम है, इसका मुझे ख्याल है। इस कारण से मैं अपना भाषण लम्बा नहीं चाहता, यदि मेरे दिल में कई बातों पर अपना विचार प्रकट करने की इच्छा थी। मैं इतना ही खास कहना चाहता हूं कि अभी भी सभी प्रांतों में और सभी जगह शिड्यूल कास्ट के लोगों को जितनी मदद हिंद सरकार देना चाहती है, उतनी मदद उन्हें नहीं मिलती है। उनके लिये बिना फी की शिक्षा का प्रबंध, शिक्षा के लिये आर्थिक साहाय्य और पढ़े हुए लोगों को गवर्नमेंट सर्विस में जगह मिलनी चाहिये। यह बातें मिलने में आज बहुत मुशिकलातें आगे आती हैं, जिसके ऊपर कोई भी ख्याल नहीं किया जाता। इससे लोगों में असंतोष फैलता है और यह असंतोष आगे चलकर राजकीय स्वरूप धारण करता है जिससे देश की बहुत हानि होती है मगर मुझे विश्वास है कि सरदार साहब जल्द ही हमारी यह आपत्तियां भी दूर कर देंगे।

अन्त में फिर एक बार सरदार साहब को धन्यवाद देकर मैं उनके प्रस्ताव का पूरा समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** माननीय सदस्य देख रहे होंगे कि मैं अल्संख्यक वर्गों के वक्ताओं को ही अपनी बात कहने के लिये समय दे रहा हूं।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रांत : जनरल): पर श्रीमान्, उनके संबंध में क्या होगा जिनका कि इस प्रस्ताव से मतभेद है? उनको भी अपनी बात कहने का मौका जरूर मिलना चाहिये।

***अध्यक्ष:** जो इस प्रस्ताव के विरुद्ध बोलना चाहते थे उनको भी मैंने मौका दिया है।

***सरदार सुचेत सिंह** (पटियाला और ईस्ट पंजाब स्टेट्स यूनियन): माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल ने जो प्रस्ताव यहां पेश किया है उसका मैं पूर्णतया समर्थन करता हूं, सिखों में जो पिछड़े हुए वर्ग हैं उन्हें राजनैतिक प्रयोजनों के लिये जो अनुसूचित जातियों में शामिल कर लेने का जो निर्णय है वह बड़ी ही खुशी का विषय है और परामर्शदातृ समिति उसके लिये बधाई का पात्र है। अवश्य ही यह खेद की बात है कि सिख समाज वर्ग और सम्प्रदाय संबंधी भेदभाव को पूर्णतया दूर करने में कामयाब नहीं हो सका जिसके लिये कि उसका प्रादुर्भाव हुआ था। देश के अन्य समाजों में जाति या वर्ग की भावना वर्तमान है वह चिरकाल से चली आ रही है। और उन लोगों में संस्कारबद्ध हो गई है। सिखों में वर्ग सम्बन्धी भेदभाव का जो दु:खद दृश्य आप देख रहे हैं वह बहुत इसी कारण से है कि इस देश में यह भावना आज अर्से से चली आ रही है। पर वस्तुस्थिति को देखते हुए, परामर्शदातृ-समिति इससे अच्छा कोई निर्णय नहीं कर सकती कि अनुसूचित जातियों को जो सुविधायें और विशेषाधिकार दिये गये हैं वही अन्य पिछड़े हुए वर्गों को दिये जायें चाहे वे किसी मत के मानने वाले हों और परामर्शदातृ समिति को इस सिफारिश को मंजूर करने के सिवा, यह सभा ही कुछ और अच्छा निर्णय कर सकती है। समिति की सिफारिशें अभिनन्दनीय हैं क्योंकि लाभ इससे यह होगा कि पिछड़े हुए वर्गों में जो भेदभाव बरता जा रहा था वह दूर हो जायेगा। धर्म के आधार पर तो इस भेदभाव को कभी जारी ही न रहने देना चाहिये था। और फिर अपने असाम्प्रदायिक राज्य के सिद्धांत के अनुकूल अगर हमें कोई प्रगति करनी है तो, जैसा कह चुका हूं, परामर्शदातृ समिति इसके अलावा और कुछ कर नहीं सकती थी। असाम्प्रदायिक राज्य की कल्पना या अनुभव सिखों के लिये कोई नई बात नहीं है। महाराजा रणजीतसिंह का राज्य यद्यपि उसमें प्रजातंत्रीय शासन व्यवस्था नहीं थी, अमली और सैद्धांतिक दोनों ही दृष्टियों से सर्वथा एक असाम्प्रदायिक राज्य था क्योंकि उनके वजीरों में और उच्च पदाधिकारियों में कई हिंदू और मुसलमान सज्जन थे। उनकी राजकीय भाषा पर्शियन थी। कितने विरोधाभास की बात है कि रणजीतसिंह का राज्य एक सिख राज्य था पर वह साम्प्रदायिक नहीं था और जमाने की पूर्ण असाम्प्रदायिकता और मानवता उस राज्य में अभिव्यक्त थी। सिख लोग स्वभाव से ही लोकतंत्रीय भावना रखने वाले होते हैं और शुद्ध असाम्प्रदायिक वातावरण में ही उन्हें सुख मिलता है।

मुझे खुशी है कि संरक्षण, रक्षण, पासंघ और परिभार के लिये जो-जो कई खास मांगें की गई थीं और जो कि सर्वथा अलोकतंत्रीय थीं उन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। सिख लोग उद्योगशील और परिश्रमी होते हैं और प्रतियोगिता से वह नहीं डरते हैं, अगर वह ईमानदारी से की जाये। राजनैतिक, आर्थिक या प्रशासन संबंधी किसी भी क्षेत्र में क्यों न प्रतियोगिता उन्हें करनी हो वह उसके लिये सहर्ष तैयार रहते हैं। जीवन के हर क्षेत्र में हम अपने देशवासियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने के लिये तैयार हैं। हम उनसे

[सरदार सुचेत सिंह]

किसी भी तरह पृथक् होकर अलग रहना नहीं पसन्द करते हैं। हमने अपने राष्ट्रीय भावना सम्पन्न कार्यों और सेवाओं के बल पर यह नाम पैदा किया है कि हम भारतीय संस्कृति सम्यता और यहां की सामाजिक व्यवस्था के रक्षक कहे जाते हैं और हमारे लिये यह कहा जाता है कि विदेशी शासकों के अत्याचारों से हमने इनकी सदा रक्षा की है। हमें अपने को रक्षण मांगने की स्थिति में पाकर कभी खुश नहीं होना चाहिये। आत्म सम्मान और आत्म प्रतिष्ठा के प्रश्न को तो जाने दीजिये जोकि जहां तक कि सिखों का संबंध है यह उनके लिये महत्त्व का प्रश्न है, मैं पूछता हूं कि आखिर जो संरक्षण आप चाहते हैं वह किससे बचने के लिये? क्या आपको अपने ही देशवासियों से ही जो विदेशी शासन को समाप्त करने के जंग में सदा आपके साथी रहे हैं, डर है? जनतंत्र की स्थापना के लिये हमारे समुदाय ने और धर्म ने शताब्दियों तक संघर्ष किया है। तो अब क्या उसी जनतंत्र से डर कर आप संरक्षण की मांग करना चाहते हैं? क्या आप संरक्षण की मांग करते हैं हिंदुओं के डर से जिनके लिये हमारे गुरु श्री तेगबहादुर जी ने हंसते हुए इसी नगरी में अपने प्रणों की आहुती दे दी थी? सिख धर्म और सिख सम्प्रदाय ने देश के इतिहास में वह पार्ट अदा किया है जो उसका फर्ज था और उसे इस बात का यकीन है कि वह न केवल अपने को ही कायम रखने में समर्थ होगा बल्कि भविष्य में संकट आने पर सदा वह उस महत्त्वपूर्ण प्रयोजन को भी सिद्ध करेगा जिसके लिये गुरुओं ने उसका निर्माण किया था। मैं अपने उन सहधर्मियों से सहमत नहीं हूं जिनका यह ख्याल है कि आजादी हासिल हो जाने पर सिखों की उपयोगिता समाप्त हो गई है और अब उनको संरक्षण, रक्षण और पासंघ आदि के पवित्र कटघरे में ही सुरक्षित रखा जा सकता है। मुझे तो इस विचार से ही घृणा है। उन अलोकतंत्रीय और पुरानी जीर्ण-शीर्ण व्यवस्थाओं को, जिनको कि यहां अंग्रजों ने अपने आधिपत्य को एक अर्सा तक चालू रखने के लिये और स्थायी बनाने के लिये चलाया था, हमें साहस के साथ सदा के लिये समाप्त कर देना चाहिये। साम्प्रदायिक दृष्टिकोण का अस्तित्व और विशेष प्रतिनिधान की व्यवस्था अल्पसंख्यकों के हित के लिये कभी भी अनुकूल नहीं है क्योंकि इससे, यह होगा कि बहुसंख्यक वर्ग के मकाबले में अल्पसंख्यक स्थायी रूप से एक अनुकूल स्थिति में पड़ जायेंगे। हमारा धर्म अजेय है, उस पर कभी किसी तरह से आघात नहीं किया जा सकता है। यह कहना कि अपनी ही भूमि में और अपने ही वातावरण में आज हमारा धर्म खतरे में है, यह सूचित करता है कि ऐसी आशंका प्रकट करने वाले व्यक्ति सिख धर्म के मूलभूत गुणों और खूबियों का ज्ञान नहीं रखते हैं और उन्हें ठीक-ठीक समझते नहीं हैं। ईश्वर में विश्वास, स्वातंत्र्य, समानता, भ्रातृभाव, गरीब और सताये हुए व्यक्तियों के विरुद्ध किये जाने वाले अत्याचार और अन्याय के प्रतिरोध का साहस तथा प्राण देकर भी नीति पर कायम रहने का सुविचार आदि गुण दुनियां में जब तक अपेक्षित समझे जायेंगे तब तक मानव जगत् में, सिख सम्प्रदाय को और उनकी सेवा, आत्म त्याग और विश्वास भावना को सदा ऊंचा स्थान मिलेगा। सिख चाहते थे सामाजिक न्याय, और अपनी न्यायपूर्ण आकांक्षाओं का समुचित आदर और यह खुशी की बात है कि भारत के भाग्य निर्माता दो विशिष्ट नेताओं से—मेरा मतलब है माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू और सरदार वल्लभभाई पटेल से—पर्याप्त मात्रा में हमें यह दोनों ही बातें प्राप्त हुई हैं। इन दो उदार हृदय नेताओं की विशाल सहृदयता,

सहानुभूति और राजनीतिज्ञता के कारण ही वह सम्भव हो सका कि सिख अपनी साम्प्रदायिक मनोवृत्ति को और अपनी पार्थक्य भावना को छोड़ने में समर्थ हो सके और देश की सुख समृद्धि में अन्य देशस्थ सम्प्रदायों के साथ बराबर के साझीदार बन सके। सिख चाहते हैं कि सबके साथ समान बर्ताव किया जाये और अपने विधान में इनके लिये पूर्ण व्यवस्था रखी गई है। इसलिये सिख अब अपने-अपने देश बन्धुओं—हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई और पारसियों—के साथ अपने भाग को एक कर देने के लिये प्रस्तुत और दृढ़ संकल्प हो जायेंगे। अब उनके सामने खुला हुआ क्षेत्र है जहां सबके साथ न्याय ही बरता जायेगा और किसी के प्रति पक्षपात न किया जायेगा। यही सिख चाहते थे। भाषा का प्रश्न, प्रांत निर्माण का प्रश्न और शरणार्थियों के पुनर्वास का प्रश्न, इन सभी बातों पर मुझे विश्वास है कि संबंधित अधिकारियों द्वारा समुचित रूप से विचार किया जायेगा। सेवाओं में प्रतियोगिता के आधार पर भर्ती की व्यवस्था होने से हमको भी देशवासियों की तरह इस बात का समान मौका मिलेगा कि गुण और योग्यता के आधार पर हम जो पा सकते हों पायें।

सिखों को इसके लिये प्रसन्नता और गौरव का बोध करना चाहिये कि हमारी राष्ट्रीय महासभा (Indian National Congress) ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध संग्राम संचालन में सदा हमारे गुरुओं के इतिहास और पथ के अनुसार ही चलती रही है। राष्ट्रपिता से प्रेरणा और प्रकाश प्राप्त करते हुए उनके नेतृत्व में कांग्रेस ने सिद्धांत और क्रियात्मक रूप से, निष्ठापूर्वक अहिंसा व्रत का सदा ही पालन किया जिसकी हमारे पहले गुरु से लेकर नवें गुरु तक, सभी गुरुओं ने शिक्षा दी है और उस पर अमल किया है। और अभी हाल में कांग्रेस शासन ने विकल्प मार्ग के रूप में हैदराबाद में जो पुलिस कार्रवाई की है और काश्मीर में आक्रमण का जो प्रतिरोध किया है वह भी उन्हीं सिद्धांतों के अनुसार किया है जिनकी शिक्षा गुरु गोबिन्द सिंह जी ने दी है और जिस पर उन्होंने अमल किया है गुरु गोबिन्द सिंह जी का कथन था:

चुकार अब हमा हीलते दर गुजरत

हलालस्त बुर्दन बशमश्मीर दस्त।

इसका मतलब यह है कि जब शांतिमय उपाय असफल हो जायें उस हालत में तलवार का सहारा लेना जायज है। मुझे विश्वास है कि देश के विभिन्न सम्प्रदायों और मतों में अब एक्य भाव उत्पन्न हो जाने पर, इस नई व्यवस्था में देश की सेवा के लिये मिलजुल कर काम करने का और चिंतन करने का हमें अधिकाधिक अवसर मिलेगा। इन शब्दों के साथ में सभा से सिफारिश करता हूं कि वह इस प्रस्ताव को स्वीकार करे।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्तप्रांत : मुस्लिम): सरदार पटेल के प्रस्ताव को अपना पूर्ण समर्थन देने के लिये ही मैं आज खडा हो रहा हूं। वस्तुतः मुझे ऐसा करने में बड़ी ही खुशी हो रही है क्योंकि अभी हाल ही में ऐसा मौका आया था कि मैंने उनकी बात से अपना मतभेद प्रकट किया था और अनिच्छापूर्वक ही मुझे ऐसा करना पड़ा था।

[मौलाना हसरत मोहानी]

श्रीमान्, मैंने स्थान-रक्षण के सिद्धांत का विरोध किया था और ऐसे समय जबकि कांग्रेस पार्टी उसके पक्ष में थी। इस व्यवस्था को रखने के पक्ष में कांग्रेस पार्टी की दलील यह थी कि ''स्थान-रक्षण की व्यवस्था को हम नहीं चाहते हैं पर मुसलमानों के साथ हमें कुछ रियायत बरतनी ही होगी और यही कारण है कि इसे कम से कम दस साल तक तो हम रखना ही चाहते हैं''। उस पर मैंने यह कहा था—मैं 4 जनवरी सन् 1949 ई. की कार्रवाई की सरकारी रिपोर्ट जो प्रकाशित हुई है उससे यहां पढ़ रहा हूं—''हम कोई रियायत लेना नामंजूर करते हैं। अगर बहुसंख्यक दल या कांग्रेस पार्टी स्थान-रक्षण के स्थान को स्वीकार करती है तो उसका असाम्प्रदायिक राज्य स्थापित करने का और साम्प्रदायिकता को समाप्त करने का जो दावा है वह झूठा हो जायेगा।''

अब प्रस्तुत प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करते हुए मैं उन संशोधनों को लेता हूं जिनको मेरे कतिपय मद्रास से आये बन्धुओं ने पेश किया है। उनके संशोधनों का विरोध मैं उस तथ्य के आधार पर करता हूं कि वे मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित करना चाहते हैं। मुस्लिम लीग अब समाप्त हो चुकी है पर मिस्टर मुहम्मद इस्माइल यह कहते हैं अखिल भारतीय मुस्लिम का अस्तित्व अभी बाकी है। मैं पूछता हूं वह मुस्लिम है कहां? हमें हमेशा के लिए अब यह फैसला कर लेना चाहिए कि हम यहां ऐसी पार्टियां न रहने देंगे जो साम्प्रदायिकता के आधार पर खड़ी हों। अगर हम सही-सही लोकतंत्रीय राज्य की स्थापना करना चाहते हैं तो फिर साम्प्रदायिक या धार्मिक पार्टियों की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती है। इस बात को सभी जानते हैं कि लोकतंत्रीय व्यवस्था का मतलब ही है बहुमत का शासन और इसलिए लोकतंत्र में यह जरूरी है कि अल्पमत को बहुमत के फैसले के आगे सर झुकाना ही होगा। अब मैं पूछता हूं आखिर क्या कारण है जिसके लिए अल्पसंख्यक वर्ग बहुसंख्यक वर्ग के फैसलों को मानने के लिए तैयार होते हैं? वह ऐसा इसी धारणा के आधार पर करते हैं कि कालान्तर में जनमत उनके पक्ष में हो जाने पर यह संभव है कि शासन की बागडोर उनके हाथ में आ जाये और बहुमत वाले अल्पमत हो जाये और अल्पमत वाले बहुमत का रूप ग्रहण कर लें। इसलिए लोकतंत्रीय पद्धति तभी सुचारू रूप से काम कर सकती है जबकि पार्टियों का स्वरूप शुद्ध राजनीतिक हो। अगर धर्म के आधार पर चलने वाली केवल साम्प्रदायिक पार्टियां ही रहेंगी तो लोकतंत्र का सारा उद्देश्य ही व्यर्थ हो जायेगा। अगर देश में मुसलमानों की पार्टी, इसाइयों की पार्टी और पारसियों की पार्टी बनती हैं तो इसका आखिर क्या नतीजा होगा? लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में इन्हें कैसे बहुमत प्राप्त हो जायेगा? सम्प्रदाय या धर्म के आधार पर पार्टियों का निर्माण होने देना बिल्कुल ही वाहियात बात है। इसलिये, मद्रास से आये हुए बन्धुओं के लिए या सिखों या पारसियों के लिए साम्प्रदायिक आधार पर पार्टी बनाना बिल्कुल बेकार है। लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में उन्हें राजनीतिक आधार पर पार्टी बनानी चाहिए। मुस्लिम बन्धुओं को मैंने हमेशा यही राय दी है कि साम्प्रदायिकता को वह सदा के लिए विदा कर दें। जब स्थान-रक्षण की व्यवस्था न रहेगी तो बाध्य होकर वह राजनीतिक आधार पर अपनी पार्टी बनायेंगे और अन्य पार्टियों से मिलकर काम करेंगे या अपना अस्तित्व खो बैठेंगे। सार्वजनिक जीवन में उनको कोई स्थान न रह जायेगा। मेरा कहना यह है कि मुसलमानों को एक जुदा ही पार्टी बनानी चाहिए जिसका नाम हो इंडिपेंडेंट पार्टी या इंडिपेंडेंट सोशलिस्ट पार्टी।

मैं पसन्द करूंगा कि उसका नाम आजाद पार्टी हो और मेरे बन्धु श्री शरत चन्द्र बोस की पार्टी से उसका तात्लुक रहे। श्री बोस के वामपक्षीय दल के साथ मिलकर वह अपनी एक संयुक्त पार्टी बना सकते हैं। ऐसा करने पर ही मेरे मुसलमान भाई लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में हाथ बटाने की आशा कर सकते हैं। जोकि राष्ट्रीयतावादी दल का आज बहुमत है पर इस संयुक्त दल के लिए यह संभव हो सकेगा कि आगे चलकर कभी यही अपना बहुमत बना ले। उस हालत में कांग्रेस या राष्ट्रीयतावादी दल का अल्पमत रह जायेगा। जब तक हम ऐसा नहीं करते हैं कोई भी अल्पसंख्यक वर्ग जो वामपक्षीय दलों से सहयोग करके संयुक्त दल नहीं बनाता है, आशा की कोई भी सूरत नहीं रखता है। अकेले अपने बल कोई भी दल चाहे सोशिलिस्टों का हो या कम्युनिस्टों का हो या और किन्हीं का, अगर कांग्रेस का मुकाबला करेगा और चुनाव लड़ेगा तो वह कभी भी विजयी नहीं हो सकता है। आपके सामने इसकी ताजा मिसाल है संयुक्त प्रांत के हाल के चुनाव में सोशिलिस्ट पार्टी की हार। इसलिए कांग्रेस दल के अलावा अन्य राजनैतिक दलों के लिए यह जरूरी है कि आपस में मिलकर एक संयुक्त दल का वह निर्माण करें, अगर वह चाहते हैं कि बहुमत में आये और शासन का संचालन करें। उस सूरत में अगर हम राजनीतिक आधार पर दल का निर्माण करते हैं तो राजनैतिक दृष्टि से जो अल्पसंख्यक रहेंगे उनके हितों के लिए संरक्षण का सवाल उठेगा। यहां आकर मुझे माननीय मित्र लारी का समर्थन करना पड़ता है। संरक्षण की व्यवस्था के लिए उनका जो प्रस्ताव है वह किसी साम्प्रदायिक पार्टी को संरक्षण देने के लिए नहीं बल्कि राजनीति के आधार पर बनी पार्टियों को संरक्षण देने के लिए ऐसी पार्टी फिर चाहे सोशलिस्टों की हों, कम्युनिस्टों की हो या फारवर्ड ब्लाक वालों की हो। अगर अनुपाती प्रतिनिधान की रियायत देने के लिए भी आप तैयार नहीं हैं तो समाजवादी दल जैसे दल को भी, जिसे कि अभी संयुक्त प्रांत के चुनाव में 35 प्रतिशत वोट मिले थे, एक भी स्थान न मिल सकेगा। पर एक बात के संबंध में हम श्री लारी से मतभेद रखते हैं उनका विचार यह प्रतीत होता है कि राजनीति के आधार पर बने दलों को अगर अनुपाती प्रतिनिधान की रियायत दे दी जाती है तो स्थान-रक्षण की व्यवस्था की जरूरत नहीं रह जाती है। अगर यह रियायत नहीं दी जाती है तो श्री लारी, जैसा कि उनके कहने से मालूम होता है, या तो वह अपनी विपक्षी नीति को बदल देंगे या इस मामले में सर्वथा तटस्थ हो जायेंगे। उन्होंने यहां कहा ऐसा ही है। पर मेरे साथ ऐसी बात नहीं हैं। अगर अनुपाती प्रतिनिधान की व्यवस्था नहीं की जाती है तो भी मैं स्थान-रक्षण की व्यवस्था नहीं चाहूंगा क्योंकि अगर वामपक्षीय दल आपस में मिलकर एक संयुक्त दल बना लेते हैं तो उस हालत में बहुत जल्द ही खुद कांग्रेस ही अनुपाती प्रतिनिधान की मांग करने लगेगी। उस हालत में तो यह राष्ट्रीयवादी दल अनुपाती प्रतिनिधान पाने के लिए खुद शोर मचाने लग जायेगा। अगर बहुत से वामपक्षीय दल आपस में मिल जाते हैं तो राष्ट्रीयतावादी दल के लिए यह संभव न होगा कि वह चुनाव में हमें हरा दें। वामपक्षीय दलों का जो सम्मिलित संगठन होगा वह बहुमत में रहेगा, भले ही उनके लिए राष्ट्रीयतावादी दल को पछाड़ना संभव न हो पर उसके लिए चिंतित होने की हमें जरूरत नहीं है। समय आ रहा है जबकि राष्ट्रीयतावादी दल बाध्य होकर अनुपाती प्रतिनिधान की रियायत मांगने लगेगा।

[मौलाना हसरत मोहानी]

श्री सादुल्ला साहब एक प्रांत के प्रधानमंत्री रह चुके हैं और उन्हें बहुत कुछ तजुर्बा हासिल है। मुझे उनके इस कथन पर कि इस मसले का निबटारा सभा के मुसलमान प्रतिनिधियों की राय से होना चाहिए, बड़ा आश्चर्य हुआ है। मैं तो उनके इस सुझाव को हास्यास्पद और बिल्कुल व्यर्थ समझता हूं। सभा के सामने सरकार पटेल का प्रस्ताव है और सभा को उस पर अपनी राय देने का पूरा अधिकार है। इसलिए मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है श्री सादुल्ला साहब के ऐसे सुझाव पर। मैं जानता हूं कि सभा के कुछ मुसलमान सदस्य स्थान-रक्षण के पक्ष में हैं। पर इससे क्या? अगर बहुमत इसके पक्ष में हो तो भी में परवाह नहीं करूंगा। इस प्रस्ताव पर निर्णय तो सभा के सभी सदस्यों के मत से ही होना चाहिये। अगर केवल मुसलमान सदस्यों की ही राय वे आधार पर इस प्रस्ताव पर निर्णय किया जाता है तो यह एक बड़ी ही उपहासास्पद और वाहियात बात होगी। इसका मतलब तो यह होगा कि हम साम्प्रदायिकता को समाप्त करने नहीं जा रहे हैं। इसका मतलब यह होगा कि हम अन्य प्रश्नों का भी फैसला इसी तरह जुदागाना राय के आधार पर करेंगे। अवश्य ही एक बड़ी ही वाहियात बात होगी। मैं यह नहीं पा रहा हूं कि उनके जैसे अनुभवी व्यक्ति ने आखिर ऐसा वाहियात सुझाव रखने का साहस ही कैसे किया। इन शब्दों के साथ, मैं श्रीमान सरदार पटेल के प्रस्ताव का हार्दिक समर्थन करता हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** अध्यक्ष महोदय, हमारे महान नेता सरदार वल्लभभाई पटेल अपनी दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध हैं और उन्होंने जो प्रस्ताव यहां रखा है मैं उसका हार्दिक समर्थन करता हूं। भारत के राजनैतिक एकीकरण के प्रश्न को हल कर लेने के बाद अब आप इसके साम्प्रदायिक एकीकरण के प्रश्न को ले रहे हैं। मेरा ख्याल है कि उन्होंने जो प्रस्ताव सभा के सामने रखा है उससे साम्प्रदायिक एकीकरण का जो हमारा उद्देश्य है वह बहुत हद तक पूरा हो जायेगा। इस संबंध में मैं चाहता हूं कि कतिपय बातों पर सरदार पटेल कुछ प्रकाश डालें। इसी विचार से, श्रीमान्, मैंने आपसे चन्द मिनट मुझे देने का अनुरोध किया था।

इस संबंध में पहली बात जो मैं सभा के सामने कहना चाहता हूं। वह यह है कि मुझे इस बात की बड़ी खुशी है कि यहां हमारे मुस्लिम बन्धुओं ने—करीब-करीब सभी ने ही आरक्षण हटाने के प्रस्ताव का समर्थन किया है और यह कहा है कि धारा सभाओं मे प्रतिनिधान सर्वथा असाम्प्रदायिक आधार पर होना चाहिये। यह सौभाग्य की बात है कि आज इन लोगों की यह राय है। पर इस संबंध में मुस्लिम बन्धुओं को एक बात ध्यान में रखनी चाहिये और वह यह कि अब जबकि चुनाव साम्प्रदायिकता के आधार पर न होकर राष्ट्रीयता के आधार पर होगा तो पहले के एक या दो निर्वाचन ऐसे नहीं होंगे जिनको हम आदर्श कहें। ऐसा भी मौका आ सकता है कि मुसलमान जगहें खो बैठें क्योंकि संरक्षित स्थानों की व्यवस्था को हम अभी-अभी उठा रहे हैं मुसलमान बन्धुओं को यह मालूम हो जाना चाहिये कि देश की वर्तमान स्थिति में मुसलमान होने के नाते एक ही जगह पाना उनके लिए बहुत कठिन होगा। उस काल तक जब तक कि शेष भारत यह नहीं महसूस करता कि वह और मुसलमान एक हैं, मुसलमानों को चुनाव में जगहें खोनी

ही पड़ेंगी। उनको अपने व्यवहार द्वारा इस बात के औचित्य को प्रमाणित करना होगा कि वह अपनी वर्तमान जगहों के पाने के अधिकारी हैं। इसमें कुछ समय लगेगा। पर अपनी लक्ष्य प्राप्ति के लिए अगर संसद कुछ काल तक बिना किसी मुस्लिम सदस्य के भी रहे तो मुझे इसका दु:ख न होगा क्योंकि एक या दो निर्वाचन के बाद जो चुनाव लड़े जायेंगे वह सेवा और योग्यता के आधार पर लड़े जायेंगे न कि साम्प्रदायिकता के आधार पर। इसलिए, जब मुसलमान बन्धु साम्प्रदायिक प्रतिनिधित्व और संरक्षित स्थानों की व्यवस्था को उठा देने पर तैयार हैं तो उन्हें यह समझ लेना चाहिये कि अभी-अभी जो चुनाव होंगे उनमें उनको नुकसान उठाना पड़ेगा और धारा सभाओं में कुछ अर्से तक उनको जगहें न मिल पायेंगी। इतनी बड़ी तादाद में आना उनके लिए मुश्किल होगा जितनी तादाद में कि अब तक वह आते रहे हैं। मुझे आशा है कि, इस समाज के विद्वान सदस्य, जब इस प्रस्ताव का समर्थन कर रहे हैं, तो इस उक्त तथ्य को वे अच्छी तरह समझते होंगे।

दूसरी बात जिस पर मैं जोर देना चाहता हूं वह है अनुसूचित जातियों के संबंध में। जब उनको शुरू-शुरू में पृथक् प्रतिनिधान दिया गया था तो गांधी जी ने इसके विरुद्ध उपवास प्रारम्भ कर दिया था। अब ऐसा प्रतीत होता है कि हमने व्यवस्था को स्वीकार सा कर लिया है। पर पहले पहल जब यह पद्धति चालू की गई थी तो हम सभी को इससे बड़ा सदमा पहुंचा था। तब इसे कोई भी नहीं पसंद करता था और महात्मा जी ने जब इसके विरुद्ध आमरण उपवास की घोषणा की तो ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री ने इस संबंध में गांधी जी को 8 सितम्बर सन् 1933 को एक पत्र लिखा था जिसमें उन्होंने कहा था:

> ''सरकारी योजना के अनुसार दलित वर्ग के लोग हिंदू समाज के अंग बने रहेंगे और हिंदू निर्वाचकों के साथ ही समान स्तर पर मतदान में भाग लेंगे पर प्रारम्भिक बीस वर्षों तक, निर्वाचक के रूप हिंदू समाज का अंग बने रहने पर भी, उनके लिए एक बड़ी ही सीमित संख्या में कतिपय विशेष निर्वाचन क्षेत्रों की व्यवस्था रहेगी जिससे उन्हें अपने अधिकारों और हितों के सरंक्षण का एक रास्ता मिल जायेगा और हम लोगों को इस बात का पूरा यकीन हो गया है कि मौजूदा हालात में यह व्यवस्था जरूरी है।''

इस तरह आप देखेंगे, श्रीमान् कि अनुसूचित जातियों को पृथक् प्रतिनिधान देने का विचार जब शुरू-शुरू में कार्यान्वित किया गया था तो इसी इरादे से कि यह व्यवस्था केवल बीस साल तक ही चालू रखी जायेगी। बीस साल के बाद, यह आशा की गई थी कि, ये जातियां हिंदुओं के साथ मिलकर सर्वथा एक हो जायेंगी। यह व्यवस्था प्रारम्भ की गई थी सन् 1933 में और अब 1949 का साल चल रहा है। अब बीस साल से कुछ ही कम दिन रह गये हैं। ब्रिटिश सरकार की पुरानी योजना के अनुसार भी अनुसूचित जातियों के लिए पृथक् प्रतिनिधान की व्यवस्था 1952 में ही समाप्त हो जानी चाहिये। फिर आप इसे दस साल तक और क्यों आगे बढ़ा रहे हैं? फिर एक और भी बात हैं, श्रीमान्, अनुसूचित जातियों की सूची पर आप अगर नजर दौड़ायें तो देखेंगे कि उसमें बहुतेरी जातियां शामिल कर ली गई हैं। अनुसूचित जातियों के लिए पृथक् प्रतिनिधान की व्यवस्था का अनुभव हमें प्राप्त हो चुका है। जो वास्तविक स्थिति है उसे मंजूर करना चाहिये।

[श्री महावीर त्यागी]

''अनुसूचित जातियां'' यह जो संज्ञा है वह केवल दिखावे के लिए है क्योंकि अनुसूचित जाति बोलकर कोई जाति है ही नहीं। असल में यह संज्ञा निकाली गई थी उन जातियों के लिए जो पिछड़ी हुई हैं, गरीब हैं अछूत हैं, और कुचली हुई हैं। भिन्न-भिन्न प्रांतों की ऐसी जातियों को ''अनुसूचित जातियों' की श्रेणी में शामिल कर लिया गया है। बावजूद इस बात के कि यह संज्ञा केवल एक दिखावा मात्र है आज अरसे से यह चालू है। इस पर भी जरा गौर कीजिये कि इन जातियों का प्रतिनिधित्व कैसे होता है। अनुसचित जातियों की सूची में सैकड़ों जातियां शामिल की गई हैं पर अगर आप यह देखें कि इनका प्रतिनिधित्व कैसे हो रहा है तो आपको हर प्रांत में यही मिलेगा कि केवल एक या दो जातियों के लोग ही सर्वत्र अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। ज्यादातर चमार जाति के लोग ही सब जगह इसके मान पर प्रतिनिधि हैं। संयुक्त प्रांत में तो ऐसा ही है और पंजाब में भी यही बात है। मैं यह जानना चाहता हूं कि आखिर इस व्यवस्था से कोरी, परना, कोरबा और डोम जातियों के लोगों को क्या फायदा पहुंचा है? यह व्यवस्था, श्रीमान्, केवल दिखावे के लिए है। आखिर डा. अम्बेडकर ही किस तरह इस वर्ग के सदस्य हैं? क्या वह अशिक्षित हैं, कम पढ़े हैं या अछूत हैं? आखिर उनके पास क्या नहीं है? भारत के अच्छे से अच्छे बुद्धि विशारदों में भी उनका एक ऊंचा स्थान है। फिर भी आपका नाम अनुसूचित जाति में रखा गया है। अब चूंकि उनका नाम उस सूची में है और वह एक प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति हैं, वह सदा धारा-सभा के सदस्य होंगे और मंत्रिमंडल में भी उनको जगह मिलेगी और हमेशा वह अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि बने रहेंगे। और फिर अभी हाल में विवाह करके एक ब्राह्मण महिला को अपनी पत्नी बनाया है। पेशे से वे ब्राह्मण हैं और अब ब्राह्मण स्वसुर और साला आ जाने से भी वे ब्राह्मण हैं। इसी तरह और लोग भी हैं। उदाहरण के लिए हमारे मित्र प्रो. यशवन्त राय को ही लीजिये। उनके पास क्या नहीं है? आपको हजारों ब्राह्मण और कायस्थ ऐसे मिलेंगे जिनकी स्थिति इन मित्रों से, जो अनुसूचित जाति में शामिल हैं, कहीं खराब है। इस तरह अनुसूचित जाति के नाम पर, खुशहाल लोग, और इन जातियों के चन्द चुने हुए व्यक्ति ही, लाभ उठाते हैं। यह सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं है। स्थान-रक्षण की व्यवस्था से किसी भी जाति को कोई वास्तविक लाभ नहीं मिल पाता है। चन्द व्यक्ति या परिवार ही इससे लाभान्वित होते हैं इसलिये जब हम पृथक् निर्वाचन और संरक्षित स्थानों की व्यवस्था उठा रहे हैं, श्रीमान्, और जाति के आधार पर बनी इस व्यवस्था को सदा के लिए समाप्त करने जा रहे हैं तो फिर इसे दस वर्ष के लिए ही और क्यों चालू रहने दें? क्या हमारा अनुभव यह नहीं प्रकट करता है कि सैकड़ों अनुसूचित जातियों में से केवल चन्द जातियों को ही प्रतिनिधित्व मिल जाता है। फिर अनुसूचित जाति के साथ जबरदस्ती इतनी अन्य जातियों को आप क्यों बांधे दे रहे हैं? इन जातियों के लोग तो केवल मतदान भर कर सकते हैं, उनको कोई लाभ इस व्यवस्था से नहीं मिल पाता है। और अगर किसी जाति का कोई आदमी चुनाव में आता है भी तो इससे उस जाति को क्या फायदा पहुंचता है? अगर जाति के आधार पर प्रतिनिधित्व न दिया जाकर वर्ग के आधार पर दिया जाये तो यह बात तो मेरी समझ में आ सकती है। पर जाति के आधार पर प्रतिनिधित्व देने से क्या लाभ है यह मैं नहीं समझ पाता हूं। समाज को जाति पाति शून्य बनाया जाये यह बात तो मैं मानता हूं पर समाज वर्गशून्य कैसे हो सकता है? जब तक मुल्क यह फैसला नहीं

करता है कि उसका समाज सर्वथा वर्ग शून्य होगा तब तक देश में वर्ग रहेंगे ही और इसलिए वर्गों को प्रतिनिधित्व मिलना ही चाहिये। समूचे मुल्क को एक दल के दायरे में लाना कभी संभव नहीं है। यह अव्यावहारिक बात है। अल्पमत वाले वर्ग रहेंगे ही और उनके प्रतिनिधान की व्यवस्था करनी ही होगी। जब तक ऐसा नहीं होगा मुल्क में शांति नहीं हो सकती है। मैं इस पर नहीं विश्वास करता कि संप्रदाय के आधार पर कोई अल्पमत हो सकता है। हां आर्थिक आधार पर, राजनैतिक आधार पर और विचारधारा वे आधार पर तो अल्पमत रहेंगे ही और उनके संरक्षण की व्यवस्था जरूर होनी चाहिये। पर आप जिस तरह फैसला कर रहे हैं उससे अल्पमत वाले लोगों को प्रतिनिधान नहीं मिल पायेगा। मैं तो सुझाव दूंगा कि अनुसूचित जाति के नाम पर प्रतिनिधान देने की व्यवस्था करने के बजाय आप भूमि रहित मजदूरों के लिए, जूते पर पालिस चढ़ाने वालों के लिए या इसी तरह के अन्य काम करने वालों के लिए, जिनको जीवन यापन के लिए पर्याप्त पैसे नहीं मिलते हैं, आप विशेष प्रतिनिधान की व्यवस्था कीजिये। जाति के आधार पर प्रतिनिधान की व्यवस्था करके उस जहर को फिर हमारे समाज के राजनैतिक शरीर में प्रशिष्ट मत कराइये जिसे अंग्रेजों ने प्रविष्ट कराया था। मैं तो कहूंगा, श्रीमान्, कि बजाय इसके कि तथाकथित अनुसूचित जातियों को संरक्षण देने के, अल्पमत वालों को और अगर आप पसन्द करें तो वर्ग के आधार पर, रक्षण दिया जाये। पालिश चढ़ाने वालों को, कपड़ा धोने वालों को और इसी तरह के अन्य वर्गों को, इस स्थान-रक्षण की व्यवस्था के द्वारा अपने प्रतिनिधि भेजने दीजिये क्योंकि ये सब ऐसे वर्ग हैं जिनको वास्तविक रूप में कोई प्रतिनिधान नहीं मिल पाता है। सही बात तो यह है कि सरदार पटेल के इस प्रस्ताव के पास हो जाने के बाद भी, मैं समझता हूं कि जैसी हालत है उसमें भूमि पर दिन-रात श्रम करने वाले गरीब किसानों को कोई प्रतिनिधान नहीं प्राप्त हो सकेगा। इस व्यवस्था में गरीब देहाती के लिए प्रतिनिधान की कोई गुंजाइश है ही नहीं। इससे तो केवल शहरवासी नागरिकों को ही रक्षण की व्यवस्था होती है। इससे जमीन पर मेहनत करने वाले गरीब किसानों को नहीं बल्कि उनके श्रम का शोषण करने वालों को फायदा पहुंचेगा। इससे तो उन्हीं लोगों को प्रतिनिधान मिल पायेगा जो कागज को स्याही से सींचते हैं, न कि उनको जो जमीन को पानी से सींचते हैं। सामान्य रूप से शिक्षा पाया हुआ यह वर्ग तो केवल डर पैदा करता है और उत्पादन मूलक कार्य तो कुछ करता नहीं, पर भूमि जोतने वालों में, संपत्ति उत्पादन करने वालों में ज्यादातर ऐसे लोग हैं जो अशिक्षित हैं और इस कारण प्रतिनिधान का अपना समुचित अंश पाने से वह वंचित ही रह जाते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि कानून पेशा वाले लोग और चन्द पढ़े लिखे व्यक्ति ही समूचे मुल्क का स्थायी रूप से मगर गलत प्रतिनिधि बने रहते हैं। हल पर कलम की हुकूमत चलती है। संपत्ति पैदा करने वालों को कोई शिक्षा नहीं मिल पाती है और शायद वे सदा ही इसी तरह रहेंगे। वे बेचारे पहले भी गुलाम थे और इस विधान के पास हो जाने के बाद भी वे गुलाम ही रहेंगे। अगर आप इन पीड़ितों की मदद करना चाहते हैं तो सर्वोत्तम उपाय यही है कि इनके लिये संरक्षण की कुछ व्यवस्था कीजिये। हमको कोई ऐसा कानून बनाना चाहिये जिससे ये अशिक्षित लोग इस सभा में आ सकें। सच तो यह है कि इस विधान-परिषद् में शायद ही कोई किसान सदस्य हो जो उस तरह का किसान

[श्री महावीर त्यागी]

हो जैसा कि हमारे देश के किसानों में 80 प्रतिशत किसान हैं। जब तक वहीं किसान अपने असली रूप में यहां नहीं आते हैं भारत का सही प्रतिनिधान हो नहीं सकता। इसलिए मेरा निवेदन यह है, श्रीमान्, कि ''अनुसूचित जातियां'' इन शब्दों को हटाकर उसकी जगह ''अनुसूचित वर्गों'' शब्द रखने चाहिए ताकि असावधानी में हम इस साम्प्रदायिक दूषण को अपनी संसद में स्थायी तौर पर स्थान न दे बैठें। वस्तुत: अछूतों में कुछ सामाजिक अयोग्यतायें हैं और अब तो प्राय: सभी प्रांतों में सरकारों ने उनकी सामाजिक अयोग्यताओं को अमान्य करने का कानून बना दिया है। जो लोग उनके प्रतिनिधि रूप में यहां आये हैं उनमें एक भी ऐसा न होगा जिसके साथ कोई भी सामाजिक अयोग्यता हो। अनुसूचित जाति का व्यक्ति ब्राह्मण कन्या से शादी कर सकता है। मैं तो कहूंगा श्रीमान् कि अनुसूचित जाति के नाम पर प्रतिनिधान की व्यवस्था का सारा लाभ आज उठा रहे हैं केवल चन्द व्यक्ति। सभा को वस्तुस्थिति पर ठंडे दिल से विचार करना चाहिए और 'अनुसूचित जाति' से क्या असल मतलब रहा है इसके बारे में हमारा जो एक लम्बा अनुभव है उससे हमें फायदा उठाना चाहिए। और फिर हमें यह फैसला करना चाहिये कि आया साम्प्रदायिक प्रतिनिधान की जगह वर्गों के प्रतिनिधान की व्यवस्था ठीक होगी या नहीं। साम्प्रदायिकता के आधार पर प्रतिनिधान की व्यवस्था न कर अगर वर्ग के आधार पर की जाती है तो मतदाता तो एक ही रहेंगे पर अन्तर यह होगा कि यह पद्धति नाम के लिहाज से कुछ अच्छी रहेगी और इससे हमारे दृष्टिकोण पर भी स्वास्थ्यकर प्रभाव पड़ेगा।

***एक माननीय सदस्य:** माननीय सदस्य क्या अपना संशोधन पेश कर रहे हैं?

, ***श्री महावीर त्यागी:** कोई संशोधन नहीं पेश कर रहा हूं क्योंकि यह संशोधन पेश करने का अवसर नहीं है। मैं संशोधन पेश करूंगा पर उस समय जब अनुच्छेद पर विचार किया जायेगा। इस समय तो आम बहस हो रही है। यह मौका संशोधन पेश करने का नहीं है। इस मसले पर मैं वाद-विवाद करने के लिए मैं दो अवसर चाहता हूं। विधान के मसौदे में प्रतिनिधान के संबंध में जो व्यवस्था सोची गई है वह बहुत सुन्दर है क्योंकि इससे साम्प्रदायिकता का विष हमेशा के लिए जाता रहता है। पर साथ ही हमें इस बात पर भी विचार करना होगा कि अगर मुसलमान चुनाव में नहीं आये तब हमारी क्या स्थिति होगी?

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): आप यह मान क्यों लेते हैं कि मुसलमान चुने ही नहीं जायेंगे।

***श्री महावीर त्यागी:** इसलिए कि मैं वस्तुस्थिति को जानता हूं, मैं ख्याली दुनिया में नहीं रहता हूं। मैं जनता का आदमी हूं और हिंदूओं की मनोवृत्ति से और मुसलमानों की वृत्ति से भी परिचित हूं। राष्ट्र को यह बात जान लेनी चाहिए। मुसलमान तो इस बात को जान गये हैं कि कुछ अरसे तक वह चुनाव में नहीं आ सकेंगे। जब तक कि वे जनता के साथ नहीं मिल जाते हैं और उसे इस बात का विश्वास नहीं दिला देते कि वे उनके साथ में हैं वह चुने नहीं जा सकेंगे। वे इस बात को जानते हैं। एक अरसे

से वे सभी बातों में अलग रहे हैं और आपकी इस व्यवस्था से आखिर एक दिन में तो यह बात न हो जायेगी कि मुसलमान साम्प्रदायकिता को छोड़कर राष्ट्रीयता को अपना लें। हां, उसमें एक ऐसा वर्ग जरूर है जो हमेशा उनका साथ देता रहा जिनके पास अधिकार थे और वह वर्ग भले ही चाहे तो ऐसा कर सकता है वह यहां के वास्तविक मुसलमानों को साम्प्रदायिकता को छोड़कर राष्ट्रीयता अपनाने में कुछ समय लगेगा। इतने दिनों तक जो वे लोग पृथक् रहे हैं वह इसलिए कि वह शेष भारत से अपने को पृथक् रखना चाहते थे। इस व्यवस्था से उन्होंने अब तक आनन्द उठाया है और अब उन्हें थोड़ी असुविधा पाने के लिए तैयार रहना चाहिए। इसलिए मेरे ख्याल से तो जो प्रस्ताव श्री लारी ने रखा है उस पर हमें विचार करना चाहिए। उनका सुझाव है कि अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्रों में सामूहिक मतदान की पद्धति बरती जानी चाहिए। इसमें कोई जटिलता नहीं है। बल्कि इसके मुकाबले में, एकल संक्राम्य मत के आधार पर, बरती जाने वाली प्रतिनिधान प्रणाली कहीं अधिक जटिल है। सामूहिक मतदान-पद्धति तो बहुत ही सरल है। मान लीजिये चार सदस्यों का एक बहुसदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्र है। वहां मुझे भी चार वोट देने का अधिकार प्राप्त है और एक मुस्लिम बंधु को भी चार वोट देने का अधिकार है। अब मुझे इस बात की आजादी है कि अपने चारों वोट चार अलग-अलग उम्मीदवारों को दूं या सब एक को ही दे दूं, या एक वोट एक को दूं और बाकी तीन या दो दूसरे को दूं। मैं अपने मतों को बांट सकता हूं या चाहूं तो अपनी पसन्द के उम्मीदवार को अपने चारों वोट दे दूं। उस व्यवस्था से अल्पमतों को भी, न केवल मुस्लिम अल्पमत को बल्कि सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट अल्पमत को भी, अपनी बात कहने का मौका मिल सकेगा।

अब मान लीजिये किसी शहरी निर्वाचन क्षेत्र में दूकानदारों का प्राधान्य है और वे अपना कोई प्रतिनिधि भेजना चाहते हैं अगर वहां ग्राहक वर्ग अपने उम्मीदवार को भेजना चाहता है तो यदि सब के सब अपने चारों वोट अपने एक उम्मीदवार को दे दें तो उसे विजयी बना सकते हैं। यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें बिना किसी साम्प्रदायिक प्रतिनिधान के, जाति या वर्ग का ख्याल किये बिना, सभी तरह के अल्पमतों का एक निशंकता या निश्चिंतता प्राप्त हो जाती है। इस व्यवस्था को अपनाकर आप आज के अल्पमतों के लिए और आने वाले अल्पमतों के लिए भी प्रतिनिधान की व्यवस्था कर सकते हैं। मैं यह कहूंगा कि सभा इस पर विचार कर सकती है कि आया सामूहिक मतदान की पद्धति कारगर होगी या नहीं। अगर सामूहिक मतदान की पद्धति अपनाई जाती है तो जाति के आधार पर कोई संरक्षित स्थान रखने की जरूरत नहीं रह जाती है। इस व्यवस्था से यह भी लाभ होता है कि अल्पमतों को अपना उम्मीदवार भेजने का मौका मिल जाता है। यह व्यवस्था अन्य देशों में और सफलता के साथ, बरती जा रही है। इसलिए मैं इस बात की जोरदार सिफारिश करूंगा कि सामूहिक मतदान की पद्धति पर विचार किया जाये। इसे दस साल के लिए ही अपना लिया जाये। अनुसूचित जातियों के लिए स्थान-रक्षण की व्यवस्था उठा दी जानी चाहिये और इसी तरह सिखों और मुसलमानों के प्रतिनिधान भी जो अलग व्यवस्था है उसे भी हटा देना चाहिए। अपनी राष्ट्रीयता पर बिना कोई धब्बा लगाये ही हम इन सबके प्रतिनिधान की व्यवस्था कर सकते हैं इस सामूहिक मतदान की पद्धति को अपनाकर। यह पद्धति सर्वथा व्यावहारिक है।

[श्री महावीर त्यागी]

मुझे इतना ही कहना था, श्रीमान्। हां, सिर्फ एक बात और कहनी है। मैं यहां सिख प्रतिनिधियों को, मुस्लिम प्रतिनिधियों को, ईसाई प्रतिनिधियों को—इन सभी बन्धुओं को—बधाई दूंगा कि उन्होंने स्थान-रक्षण की व्यवस्था को उठाने का प्रस्ताव सहर्ष मंजूर कर लिया है। उन्होंने इस संबंध में जो उदारता, ऐतिहासिक उदारता दिखाई है, आशा है देश उसकी कदर करेगा। निर्वाचक वर्ग को उनकी इस उदारता का सदा ख्याल रहेगा और मुझे इस बात का पूरा यकीन है कि देश अल्पमतों के प्रति कृतज्ञता का अनुभव करता होगा कि वे देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर स्थान-रक्षण की व्यवस्था को उठाने के प्रस्ताव को स्वीकार करने पर सहर्ष तैयार हो गये हैं।

इन शब्दों के साथ मैं यह कहूंगा कि किसी भी संप्रदाय या जाति के लिए संरक्षित स्थान की व्यवस्था न रहनी चाहिए और सभी अल्पमतों को सामूहिक मतदान की व्यवस्था द्वारा संरक्षण की व्यवस्था होनी चाहिये।

***कर्नल बी.एच. जैदी** (रामपुर-बनारस राज्य)**:** अध्यक्ष महोदय, मैं आपका कृतज्ञ हूं कि आपने इस ऐतिहासिक वाद-विवाद के सिलसिले में मुझे यहां अपना पहला भाषण देने का अवसर प्रदान किया है।

मुझे इस बात से बड़ी ही खुशी हुई है, श्रीमान्, और मैं जानता हूं कि सभा के हर वर्ग को इसकी खुशी हुई होगी, कि अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों ने और मुस्लिम प्रतिनिधियों ने भी यहां यह साबित कर दिया है, जैसा कि इसके पहले कभी नहीं हुआ था, कि देश के संबंध में उनका जो दृष्टिकोण है वह देशभक्ति पूर्ण है, ठोस है और सुलझा हुआ है। भविष्य के लिए यह एक अच्छा शकुन है। मुझे खेद है कि प्रस्तुत प्रस्ताव का विरोध केवल चन्द दाक्षिन्य मित्रों ने ही किया है। पुरानी परम्परा के उठने में लम्बा समय लगता ही है। अंग्रेजों ने जो छड़ी मुसलमानों को थमा दी थी उसके सहारे वह आज करीब साल से चलते आये हैं और उन्हें इसकी आदत सी हो गई है। हम इन सब सहारों को पसन्द करने लग गये। बहुत से मरीज जिन्हें पावों के उपयोग का अभ्यास नहीं रह गया है, उनको अगर छड़ी दे दी जाती है तो वे सदा उसी का उपयोग करेंगे और उसी के सहारे चलेंगे चाहे कोई अच्छा डाक्टर फिर उन्हें उनके पांवों के उपयोग की अच्छी शिक्षा ही क्यों न दे दे। वे हमेशा छड़ी का ही सहारा लेना चाहेंगे। छड़ी शब्द यहां कुछ मौजू नहीं है। वैसाखी शब्द को रखना ज्यादा ठीक होगा क्योंकि उससे न केवल सहारा मिलता है बल्कि कुछ बनावटी ऊंचाई भी मिल जाती है। अगर हम इस वैसाखी को फेंक देते हैं तो हमें न केवल अपने पांव की ताकत पर भरोसा करना पड़ेगा बल्कि हमारी ऊंचाई भी इससे कम हो जायेगी। इस देश में हमें कुछ झूठा महत्त्व दे दिया गया था, वह खोखला महत्त्व था, केवल एक छाया थी और अब हम उसी छाया को पकड़े रहना चाहते हैं मुझे तो यही आशा है कि कालान्तर में चलकर, किसी सूदूर भविष्य में नहीं बल्कि निकट भविष्य में ही, हमारे इन दाक्षिन्य बन्धुओं को भी यह समझ में आ जायेगा कि माननीय सरदार पटेल और देश के भाग्य का निर्माण करने वाले हमारे अन्य नेता उनके सही शुभचिन्तक थे, अहितैषी नहीं थे।

ऐसा क्यों कह रहा हूं इसका कारण भी बताये देता हूं। अगर सरदार पटेल हमारे शुभचिन्तक न होते तो उनके लिए सर्वोत्तम काम यह होता कि हमको इसी वैसाखी पर चलने देते। इससे हम जीवनभर के लिए लंगड़े हो जाते। इससे हमारा भौतिक, नैतिक सब तरह का ऐसा पतन हो जाता कि हम कभी उठ न पाते। पर उन्होंने ऐसा न करके हमारे लिए जो लाभप्रद व्यवस्था हो सकती थी उसका प्रस्ताव रखा है। जो व्यवस्था की जा रही है वह न केवल देश हित की दृष्टि से अच्छी है बल्कि अल्पसंख्यकों के हित के ख्याल से भी वह बहुत अच्छी है। हमें अपने पांवों पर चलने की आदत सिखाई जा रही है। हमें आत्मनिर्भरता की शिक्षा दी जा रही है। कोई भी व्यक्ति जिसमें आत्मसम्मान की भावना है, पुरुषत्व की भावना है वह इन कृत्रिम संरक्षणों से चिपटे रहना कभी न पसन्द करेगा। इन कृत्रिम संरक्षणों के लिए आग्रह करना, इनके लिए वकालत करना और इनसे चिपटे रहना क्या आपको अपनी प्रकृति के विरुद्ध नहीं मालूम पड़ता? आपके आत्मसम्मान भाव को इससे ठेस नहीं पहुंचती? और फिर मैं यह पूछता हूं कि ये संरक्षण क्या वास्तविक रूप में सरंक्षण है? इनसे आपको रक्षा मिलती है? इनसे आपका उद्देश्य पूरा हो जाता है? आखिर इस बात के लिए कि, यहां के मुसलमानों का भविष्य सुखमय हो वह खुशहाल रहे और ससम्मान जीवन यापन करें, उत्तम से उत्तम प्रत्याभूति (गारंटी) क्या हो सकती है? मेरी तुच्छ राय में तो उनके कल्याण के लिए दो ही बातें अपेक्षित हैं। पहली बात और सबसे जरूरी बात तो यह है कि उनमें आत्मनिर्भरता की भावना होनी चाहिये, आत्मबल होना चाहिये, आत्मसम्मान की भावना होनी चाहिए। अपने ऊपर और अपने भाग्य पर तथा जगन्नियंता परमात्मा पर विश्वास होना चाहिये। दूसरी बात यह है कि अपने बहुसंख्यक सम्प्रदाय के बन्धुओं पर उन्हें विश्वास और भरोसा होना चाहिए। वह सरंक्षण ही किस काम का जिसको पाकर आप बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सहानुभूति और विश्वास ही खो बैठें? हमारी मांग को संसद स्वीकार कर ले या नेतृवर्ग दे भी दे तो हमें क्या लाभ, अगर उससे बहुमत वर्ग के अधिकांश लोगों को नाराजगी मिले। अगर इन संरक्षणों से उनके दिमाग में हमारे खिलाफ शक ही बना रहे और वह हमसे नाखुश हो जायें तो इन संरक्षणों से हमें क्या फायदा पहुंचेगा? कोरा कागजी संरक्षण किस काम का। हमारा वास्तविक संरक्षण इस बात में है कि हम अपनी शक्ति पर निर्भर करें और अपने भाइयों की, बहुसंख्यक सम्प्रदाय वालों की—जो वस्तुतः हमारे भाई ही हैं—सद्भावना, मैत्री, बन्धुभाव, न्याय-परायणता और उदारता पर विश्वास करें।

हमारे सम्प्रदाय के सदस्यों का देश के अन्य किसी अल्पमत वाले वर्ग के सदस्यों के मन में अगर हिंदुओं की सद्भावना पर कोई शक है तो उसके दो ही कारण हो सकते हैं। या तो यह कि इस संबंध में वर्तमान पीढ़ी को बड़ा ही कटु अनुभव मिला है या फिर यह कि भारतीय इतिहास की शिक्षा ही उन्हें ऐसी दी गई है कि उन्हें अपने बहुसंख्यक बन्धुओं के सद्भाव पर भरोसा नहीं हो पाता है। जहां तक कि वर्तमान पीढ़ी का संबंध है मैं यह पूछता हूं कि कब किस अल्पमत ने यहां अपने भविष्य को और हितों को बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सद्भावना पर छोड़ा है? हमने न अपने ऊपर विश्वास किया और न अपने बहुसंख्यक बन्धुओं पर। हमने विश्वास किया केवल एक तीसरे पक्ष का। गत सौ वर्षों के इतिहास में एक भी मौका ऐसा नहीं आया है जिसकी ओर ईमानदारी से संकेत करके हम यह कह सकते हों कि यहां के बहुसंख्यक वर्ग ने हमारे हितों के साथ

[कर्नल बी.एच. जैदी]

विश्वासघात किया है। बहुसंख्यक सम्प्रदाय के सामने कभी यह प्रश्न ही नहीं आया कि वह हमारे भविष्य और हितों के संबंध में अपनी जिम्मेदारी महसूस करें। क्योंकि हमने कभी इसके लिए उसका सहारा नहीं चाहा और न हमने अपनी ताकत का सहारा चाहा, हम तो एक विदेशी ताकत का ही सदा सहारे के लिए मुंह देखते रहे और वह ताकत अपने स्थानों की सिद्धि के लिए हमें आपस में सदा लड़ाती रही और बेबस करती रही।

अगर वर्तमान शताब्दी के अनुभव से इस संबंध में हम कोई पथ-प्रदर्शन नहीं पाते हैं तो हम अपने अतीतकालीन इतिहास की ओर भी देख सकते हैं। अगर इस देश के हिंदुओं ने कभी अपनी संकीर्णता का, धर्मान्धता का और अल्पसंख्यकों को सताने का कोई सबूत दिया है तो उस सूरत में तो आपका अपने भविष्य के संबंध में उनसे डरना ठीक और उचित है। पर संबंध में इतिहास क्या बताता है? जहां तक कि मेरी जानकारी है हिंदुस्तान के इतिहास में कभी ऐसा कोई मौका नहीं आया है जब हिंदुओं ने किसी अल्पसंख्यक वर्ग को सताया हो। एक मौका तो ऐसा भी यहां आया जब हिंदू अल्पमत में आ गये थे पर उन्होंने पुन: अपने को बहुसंख्यक बना लिया। यह बात उस समय की है जबकि इस देश में बुद्धिस्टों का शासन था; उस समय हिंदू अल्पमत में आ गये थे पर धीरे-धीरे उन्होंने अपना बहुमत बना लिया। जैन भी यहां अल्पमत ही थे। इसी तरह सीरियन, क्रिश्चियन और पारसी भी अल्पसंख्यक ही थे। सच तो यह है कि भारतवर्ष ने अनेक अल्पसंख्यक सम्प्रदायों को यहां शरण दिया और उनकी रक्षा की। भारतीय इतिहास भर में इस संबंध में एकमात्र दु:खद घटना जो मैं सोच पाता हूं वह है बौद्धमत का अस्तित्व शून्य होना। बौद्धमत का जन्म इसी देश में हुआ था और यही उसका अस्तित्व नहीं रह सका। पर इस बात को अल्पसंख्यकों पर अत्याचार नहीं कहा जा सकता। मैं समझता हूं कि देश की मौजूदा पीढ़ी इसी का अब प्रायश्चित कर रही है जो वह बौद्ध प्रतीकों को अपना रही है। आज हम अपनी राष्ट्रीय पताका में और राष्ट्रीय चिन्हों में उन्हीं बातों को समुचित स्थान दे रहे हैं जिनसे हम किसी जमाने में भाग खड़े हुए थे और जिनको हमने उन दिनों में आवश्यक आदर नहीं प्रदान किया था। इसीलिए इतिहास को देखते हुए या अपनी वर्तमान पीढ़ी के तजुर्बों को देखते हुए मैं तो यही महसूस करता हूं कि अल्पसंख्यक संप्रदाय को इस डर का कोई कारण नहीं है कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय सद्भावना और मैत्री उनको न प्राप्त हो सकेगी और यह कि उनके प्रांत बहुसंख्यक वर्ग की न्याय भावना न रहेगी।

आखिर इस सभा के संबंध में ही हमारा क्या अनुभव रहा है? मैं तो यहां बहुत कम आया करता हूं पर जब भी मैं आता हूं मैं एक बात से खास तौर पर प्रभावित होता हूं। यहां हर विचारधारा के लोगों के प्रति सभी अल्पमतों के प्रतिनिधियों के प्रति बड़ी सहिष्णुता का बर्ताव किया जाता है, मैत्री बरती जाती है और मित्रवत् उनको प्रोत्साहन दिया जाता है। अल्पसंख्यक वर्ग में भी एक सदस्य ऐसे हैं जो सबसे अलग हैं, बिल्कुल अकेले हैं। मेरे माननीय मित्र मौलाना हसरत मोहानी खुद ही एक अल्पमत हैं; अपनी विचारधारा के यहां वह एक मात्र समर्थक हैं। पर उनके साथ भी मैंने यही देखा है कि सभा सदा उदारता बरतती है बल्कि सदा अपनी बात करने की आजादी देती है। मित्रवत बर्ताव

करती है और सौजन्यमय हासपरिहास का ही रुख रखती है। इस तरह चाहे इस सभा में देखिये, या कांग्रेस दल के किसी काम में देखिये, देश के नेतृत्व में देखिये, सब जगह आपको विशाल दृष्टिकोण सहिष्णुता और उदार लोकतंत्रीय भावना के अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखाई देगा। यह भी मान लें कि बहुसंख्यक सम्प्रदाय अवसर के अनुकूल नहीं उठ पाता है तो उस सूरत में भी अल्पसंख्यक वर्ग के लिए सर्वोत्तम यही होगा कि वह किसी भी संरक्षण के लिए आग्रह न करे। मैं तो यह कहता हूं कि जब तक बहुसंख्यक सम्प्रदाय में चेतना नहीं उत्पन्न होती आपको कोई संरक्षण नहीं प्राप्त हो सकता। भविष्य का संरक्षण केवल इसी बात से हो सकता है कि हमारी आंतरिक भावना में सुधार हो। केवल हमारा ही एक अकेला देश नहीं है जहां अल्पसंख्यक समस्या वर्तमान है। दूसरे देशों में और दूसरे कालों में भी अल्पसंख्यक और उनके हितों की समस्या रही है। यहां तक कि इंग्लैंड में भी अल्पसंख्यकों के प्रति हमेशा वैसा ही बर्ताव नहीं हुआ है जैसा कि हम सोचते हैं। एक विद्यार्थी के नाते मुझे ऐक्टन लाइब्रेरी में जाने का मौका प्रायः मिला करता था। एक दिन लाइब्रेरी मे मैंने एक प्रस्तर देखा जिस पर श्री ऐक्टन के मित्र लार्ड मारले के कुछ शब्द अंकित थे। प्रस्तर पर अंकित शब्दों को पढ़ने से मुझे ज्ञात हुआ कि एक रोमन कैथोलिक होने के कारण लार्ड ऐक्टन को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश होने से इंकार किया गया था, पर कालान्तर में चलकर उसी विश्वविद्यालय ने लार्ड ऐक्टन से उस बात का अनुरोध किया कि अध्यापक का पद स्वीकार कर वह विश्वविद्यालय को गौरवान्वित करने की कृपा करें। कालक्रम से सुधार आ ही जाता है। रोमन कैथोलिक लोगों के हितों का संरक्षण आखिर कैसे हुआ? पहले उनको विश्वविद्यालयों में प्रवेश मिलता था और सिविल सर्विस में उनको जगह दी जाती थी, पर कालान्तर में चलकर उनको सभी सुविधायें मिलने लगी। अंग्रेजों के दृष्टिकोण में आखिर किस बात ने इतनी उदारता ला दी? अवश्य ही रोमनों के आन्दोलन के फलस्वरूप उनमें यह उदारता नहीं आई और न प्राप्त सरंक्षणों के कारण ही। मूल बात यह थी कि देश की अन्तर्चेतना को, उसके विवेक को चोट पहुंची और उन लोगों ने यह महसूस किया कि अपने देशवासी रोमन कैथोलिक बन्धुओं के प्रति उनका व्यवहार न्यायपूर्ण नहीं रहा। दासत्व प्रथा की समाप्ति अभी हाल की बात है। आखिर इस प्रथा को किसने समाप्त किया? क्या दासों के आन्दोलन के फलस्वरूप या प्राप्त संरक्षणों के फलस्वरूप यह प्रथा समाप्त हुई? नहीं, इस प्रथा की समाप्ति इस कारण हुई कि जहां भी यह प्रथा जोरों पर थी वहां देशवासियों में चेतना जागी, विवेक जागा। मैं तो अल्पसंख्यकों के भविष्य को बहुसंख्यक सम्प्रदाय की सद्भावना और न्याय-परायणता के भरोसे पर छोड़ने को तैयार हूं। मुझे उनकी सद्भावना पर पूरा विश्वास है। पर अगर यह मान भी लिया जाये कि उनमें हमारे लिये सद्भाव नहीं है तो उस हालत में भी मैं तो उनमें सहिष्णुता और न्याय-परायणता पैदा होने तक प्रतीक्षा करना पसन्द करूंगा, पर संरक्षण का आग्रह न करूंगा जब तक अपने देशवासियों में चेतना और विवेक नहीं जागृत हो जाते हैं। मैं प्रतीक्षा करता रहूंगा चाहे इसके लिये कितनी ही कीमत क्यों न चुकानी पड़े, क्योंकि इस देश का कोई भविष्य हो ही नहीं सकता है जब तक कि यहां शुद्ध लोकतंत्रीय सिद्धांतों पर न चला जाये और सबको समान अवसर न दिया जाये। मेरे मित्र श्री तजम्मुल हुसैन ने अभी कहा है: ''इस देश में ऐसा कोई वर्ग नहीं रहता जो अपने को अल्पसंख्यक समझता हो।'' इस संबंध में मैं यह निवेदन करूंगा, श्रीमान्,

[कर्नल बी.एच. जैदी]

कि इस देश में एक अल्पमत का वर्ग है और वह हमेशा रहा है और हर मुल्क में एक ऐसा अल्पमत वर्ग है और सदा रहेगा। वह अल्पमत वर्ग है उन लोगों का जो भले हैं, न्याय-परायण हैं, जो दयालु और उदार हृदय हैं और जो मानव जाति के समुत्थान के लिए, उसकी जागृति के लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं। ऐसा एक अल्पमत इस देश में भी वर्तमान है, श्रीमान्, जिसमें शामिल हैं, माननीय सरदार पटेल, भारत के प्रधानमंत्री और अध्यक्ष महोदय आप स्वयं भी और मुझे तो यही आशा है कि सभा के सदस्यगण भी इसमें शामिल हैं। यही अल्पमत है जो देश में सच्ची लोकतंत्रीय व्यवस्था को न्यायमूलक शासन को स्थापित करना और प्रगतिशील दृष्टिकोण को अग्रसर करना अपना सिद्धांत मानता है। अगर देश के अल्पसंख्यकों को कोई आशंका है तो उनको चाहिये कि वह देश के इस गौरवशाली अल्पमत के साथ हो जायें जिसके हाथ में न केवल भारत का भाग्य बल्कि देश के सभी अल्पसंख्यक वर्गों का भाग्य सदा सुरक्षित रहेगा। अगर आपको अपनी कमजोरियों का ज्ञान है, अगर आप दुर्बल हृदय हैं तो आपको चाहिए कि आप इस अल्पमत का साथ दें और उसके हाथों को मजबूत बनायें। इसमें आपका भविष्य सुरक्षित है। (*हर्ष ध्वनि*)

***माननीय श्री सत्यनारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अब इस प्रस्ताव पर मत लिया जाना चाहिये।

***अध्यक्षः** सवाल यह है कि:

"इस प्रस्ताव पर राय की जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बई : जनरल): अध्यक्ष महोदय, अल्पसंख्यकों से संबंध रखने वाली परामर्शदातृ समिति का जब मुझे पहले-पहल सभापति नियुक्त किया गया था तो दरअसल मैं बहुत डर रहा था और उस काम को बोझिल दिल से ही हाथ में लिया था क्योंकि मैं यह महसूस कर रहा था कि गत इतने वर्षों के विदेशी शासन का जो इतिहास रहा है उसके कारण हमारा काम बड़ा ही मुश्किल है। जब मैंने इस काम को हाथ में लिया था उस समय देश एक बड़ी ही कठिन स्थिति से गुजर रहा था और सभी वर्गों के लोग सन्देह संकुल हो रहे थे। देश में जो कतिपय वर्ग थे उनमें मुश्किल से कोई परस्पर कोई विश्वास भी था। फिर भी मैं यह कहूंगा कि सत्ता के हस्तान्तरित होते ही धीरे-धीरे लोगों में परिवर्तन आने लगा जिससे मुझे बड़ा ही प्रोत्साहन मिला। मैं यह महसूस करने लगा कि लोगों में धीरे-धीरे परस्पर विश्वास और सद्भावना आती जा रही है।

अल्पसंख्यक समिति के सामने जब मैंने पहली बार स्थान-रक्षण के द्वारा कतिपय राजनैतिक संरक्षणों को देने का प्रस्ताव रखा था तो उसके संबंध में सभी अल्पसंख्यक वर्गों की अधिकाधिक सम्मति और सहमति मिल चुकी थी। डा. मुखर्जी शुरू से ही किसी

भी तरह का संरक्षण या सुरक्षित स्थानों की व्यवस्था के प्रतिकूल थे। अल्पसंख्यक वर्गों के ऐसे राष्ट्रीयतावादी नेताओं ने अवश्य ही मेरे प्रस्ताव पर असहमति प्रकट की थी। मुझे विश्वास है कि डा. मुखर्जी अवश्य ही अब इस बात से खुश होंगे कि प्रस्तुत व्यवस्था उनकी इच्छा के अनुकूल है।

जब मैंने अपने इन प्रस्तुत प्रस्तावों को सभा के सामने रखा तो लोगों का एक दल ऐसा भी निकला जिसके लिए वर्तमान दलदल से निकलना, जिसमें कि वह काफी गहराई तक धंस चुके थे, मुश्किल मालूम पड़ा। मद्रास से आये हुए एक मित्र ने स्थान-रक्षण और साम्प्रदायिक निर्वाचन की व्यवस्था के लिए एक संशोधन रखा। जब यहां साम्प्रदायिक निर्वाचन के आधार पर पृथक-पृथक साम्प्रदायिक निर्वाचन क्षेत्रों की रचना के लिए प्रस्ताव रखा गया था तो उसका समर्थन एक बड़े ही प्रसिद्ध मुस्लिम नेता ने किया था। उन्होंने इस सभा में विधान के प्रति सदा निष्ठावान बने रहने की भी शपथ ली थी पर उसके बाद ही फौरन आप मय सरो समान करांची चले गये। अब आप वहां की मुस्लिम लीग का कार्य संचालन कर रहे हैं। आप यहां से चले तो गये, पर यहां लीग की बची खुची विरासत शायद मद्रास में ही छोड़ गये हैं। दुर्भाग्य से पुरानी मुस्लिम के कोष की एक बहुत बड़ी रकम अभी भी बची हुई है जिसके संबंध में अभी तक कुछ तय नहीं हो पाया है। हमारे कुछ मित्रों का अभी भी यही ख्याल है कि उस रकम का एक बड़ा हिस्सा उन्हें मिल सकता है, अगर वह अभी भी यहां पुरानी मुस्लिम लीग का काम जारी रखें। अगर वह सारी की सारी रकम भी अथवा उसका कोई हिस्सा यहां आ भी जाता है तो मुझे शक है कि जो लोग उसे पायेंगे उनकी उससे कुछ भलाई हो सकेगी। जिन लोगों का यह कहना है कि इस देश में दो जातियां हैं और उन दोनों में किसी बात में ऐक्य नहीं है और इस बिना पर यह दावा करते हैं कि उन्हें अलग एक भूभाग मिलना ही चाहिए जहां वह स्वतंत्रतापूर्वक रह सकें, वह ऐसा कर सकते हैं। मैं उनको इस पर दोष नहीं देता हूं। पर जिन लोगों के दिमाग में अभी भी लीग का ख्याल बाकी है, जो यह ख्याल करते हैं कि लीग के योजनानुसार चलकर जब हमने अपनी एक मांग तो पूरी ही करवा ली है तो हमें अब पुनः उसी योजना पर चलना चाहिये, उनसे मैं सादर यह निवेदन करूंगा कि आप अपने नव प्राप्त प्रदेश में जाइये और वहां अपनी स्वतंत्रता का उपभोग कीजिये और हमें यहां अब शांतिपूर्वक रहने दीजिये। इस देश में उन लोगों के लिये अब कोई स्थान नहीं है जो पृथक प्रतिनिधान की मांग करते हैं। इस अभागे देश में पृथक प्रतिनिधान की पद्धति जो चालू की गई थी वह इसलिए नहीं कि उन लोगों ने, जो इस पद्धति की मांग रखने का दावा करते हैं, इसके लिए मांग की थी। बल्कि जैसा कि स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अली ने एक मौके पर कहा था, यह पद्धति हुक्मन हम पर लादी गई थी। इसका जो नतीजा हुआ उसे हम सभी भुगत रहे हैं। हमें अब अपने इतिहास में एक परिवर्तन का अध्याय लाना चाहिये और जो भी पद्धति हम लागू करें वह देशवासियों की सहमति के आधार पर लागू करें। अपने इतिहास की धारा को बदलने के लिए मैं सभा की सहमति चाहूंगा, सभी अल्पसंख्यकों की सहमति चाहूंगा। आपने यह सहमति दी है और अवश्य ही इसके लिये आप गौरव और सम्मान के पात्र हैं। आपके इस कृतित्व को जिसे कि आज आपने सम्पादित किया है, हमारी आने वाली संतानें स्वर्णाक्षरों

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

में लिखेंगी और आशा एवं विश्वास करता हूं जो कदम आप हम उठा रहे हैं उससे देश की सूरत, उसका इतिहास और उसका स्वरूप सर्वथा बदल जायेगा।

हमारे सामने इस संबंध में जो पहला संशोधन है वह सन् 1947 के अगस्त वाले अधिवेशन में नामंजूर हो चुका है। उस अधिवेशन में यह संशोधन मुख्य संशोधन था और इसी दल ने इसे उस समय भी पेश किया था। देश में जो कुछ हुआ है उसका एक दीर्घकालीन अनुभव हो जाने के बाद भी, उस पर अरसे तक सोच समझ लेने के बाद भी जब लोगों ने यह प्रस्ताव रखा है तो मैं नहीं समझता कि उनके रुख में अभी भी कोई परिवर्तन हुआ है। पर इतना मैं जानता हूं कि इस संशोधन को उपस्थित करने का उन्हें मुस्लिम लीग से आदेश मिला है। आज यह जगह ऐसी नहीं रह गई है कि आप दूसरों के आदेश पर यहां चलें। अब तो इस जगह पर आपको अपने विवेक के अनुसार चलना होगा और देश की भलाई के लिए काम करना होगा। किसी भी सम्प्रदाय का यह सोचना कि उसके हित उसके देश के हित से, जहां कि वह रहता है, कुछ अलग हैं, एक बड़ी भारी भूल है। मान लीजिये कि हम स्थान-रक्षण की व्यवस्था को स्वीकार कर लेते हैं तो उस सूरत में मैं अपने को मुस्लिम समाज का एक शत्रु समझूंगा क्योंकि एक असाम्प्रदायिक एवं लोकतंत्रीय राज्य में अगर हम ऐसी कार्यवाही करते हैं तो उसका नतीजा अच्छा नहीं हो सकता है। फर्ज कर लीजिये कि साम्प्रदायिक आधार पर पृथक निर्वाचन की व्यवस्था यहां कर दी जाती है। उस सूरत में क्या आप यह उम्मीद करते हैं कि प्रांत में या केन्द्र में कहीं भी मंत्रिमंडल में आपको कोई जगह मिल सकती है? आपके हित समस्त देश के हित से कुछ पृथक हैं। यहां जो मंत्रिमंडल होगा या जो शासन होगा वह सम्मिलित दायित्व के आधार पर होगा और जो लोग हमारा विश्वास नहीं करते हैं या बहुसंख्यक सम्प्रदाय पर जिनको विश्वास नहीं है, यह स्पष्ट है कि, वह मंत्रिमंडल में या शासन में कहीं लिये नहीं जा सकते हैं आप अपने को हुकूमत से अलग कर देंगे और हमेशा के लिए अल्पमत बने रह जायेंगे। इससे आपको क्या फायदा पहुंचेगा? क्या अभी भी यह सोचते हैं कि कोई तीसरी शक्ति ऐसी हो जायेगी जो अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों के विरुद्ध खड़ा कर देगी और आबादी के आधार पर उनके एक या दो आदमियों को हुकूमत में लेने में बाध्य कर देगी? आपका यह ख्याल गलत है। जो धारणा आपके दिमाग में अब तक थी और जिसके अनुसार अब तक आप चलते थे उसे आप हमेशा के लिए हटा दीजिये। अब यह एक स्वतंत्र देश है। यह राज्य सर्वसत्ता प्राप्त राज्य है। आपकी यह सभा सर्वप्रभुता सम्पन्न सभा है। यहां आप देश के भविष्य को अपनी मर्जी के मुताबिक स्वरूप दे रहे हैं। इसलिए बराय महरबानी आप अतीत को भूल जाइये; इसे भूलने की कोशिश कीजिये। अगर ऐसा करना आपके लिए असंभव है तो आपके लिए अच्छा यह है कि आपको अपने विचारों के अनुसार जो सर्वोत्तम स्थान मालूम पड़ता हो आप वहां चले जायें। मैं गरीब मुस्लिम जनता को नुकसान नहीं पहुंचाना चाहता हूं जिसने काफी मुसीबतें झेली हैं। अपने लिए अलग राज्य और भूभाग पाने के बारे में आपका जो भी दावा हो मुझे उसके संबंध में कुछ नहीं कहना है। आपको जो भी प्राप्त हो गया है उसके लिए भगवान् आपका भला करे। पर कृपया न भूलिये कि गरीब मुस्लिम जनता ने कितने कष्ट उठाये हैं। उनको अब शांतिपूर्वक रहने दीजिये ताकि वह अपने परिश्रम और पसीने की कमाई का सुखोपभोग कर सकें।

मुझे याद है कि जिस सज्जन ने अगस्त सन् 1947 के अधिवेशन में प्रस्ताव रखा था उन्होंने पृथक निर्वाचन की मांग करते हुए यह कहा था कि आज मुसलमान समाज एक सुसंगठित, सुसम्बद्ध और एक मजबूत अल्पमत है। यह तो अच्छा ही है। जो अल्पमत जबरदस्ती देश का विभाजन करा सकता है वह हरगिज अल्पमत नहीं हो सकता। आप अपने को अल्पसंख्यक क्यों समझते हैं? जब आपका समाज एक सुसंगठित, सुसम्बद्ध और मजबूत अल्पमत है तो आप संरक्षण क्यों चाहते हैं? आप विशेष सुविधायें क्यों मांगते हैं? इस सबकी मांग उस समय तो करना ठीक था जब यहां एक तीसरा पक्ष वर्तमान था पर अब वह बात नहीं रह गई है। अब तो सारी बात ही खत्म हो गई। आपका यह स्वप्न एक दिवा स्वप्न है और अब आपको उसे भूल जाना चाहिये। अब उसका ख्याल ही छोड़ दीजिये। अब यह न सोचिये कि कोई तीसरा पक्ष आकर रोटी का बंटवारा करने लगेगा और इन व्यवस्थाओं को चालू रहने देगा। इसलिए अल्पमत का भविष्य—चाहे कोई अल्पमत हो—इसी में है कि वह बहुमत का विश्वास करे। अगर बहुसंख्यक समुदाय दुर्व्यवहार करेगा तो उसको भुगतना पड़ेगा। अगर बहुसंख्यक समुदाय अपने दायित्व को नहीं समझता है तो यह देश के लिये बड़े ही दुर्भाग्य की बात होगी। अगर मैं किसी अल्पमत समाज का सदस्य होता तो अब मैं इस बात को भुला देता कि मैं किसी अल्पमत का सदस्य हूं। किसी भी सम्प्रदाय का व्यक्ति हमारा प्रधानमंत्री बन सकता है। आखिर ऐसा क्यों नहीं हो सकता? आखिर ब्राह्मणों को विरोध करने वाले मिस्टर नागप्पा ही क्यों यहां प्रधानमंत्री नहीं बने सकते? मुझे उनसे यह सुनकर बड़ी खुशी हासिल हुई है कि बीस एकड़ जमीन का मालिक होने के नाते वह अनुसूचित जाति का सदस्य नहीं समझे जा सकते हैं। पर उन्होंने कहा है—मुझे इस जाति के सदस्य होने का गौरव प्राप्त है क्योंकि मैंने इसमें जन्म ग्रहण किया है। इस जाति में जन्म पाने पर ही आप इसके सदस्य हो सकते हैं। मुझे बड़ी हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि इस नौजवान ने सभा भवन में यह उद्‌गार व्यक्त किया है कि अनुसूचित जाति में पैदा होने पर उसे गौरव है। आखिर इसके गौरव की बात ही क्या है? उस नौजवान बन्धु को देश में आदर का स्थान प्राप्त है। मैं तो यह चाहता हूं कि इस जाति के हर सदस्य अपने को ब्राह्मण से भी ऊंचा समझे। बल्कि मैं यह चाहता हूं कि हरिजन और ब्राह्मण यह भूल जायें कि वह अमुक जाति के सदस्य हैं और यही समझें कि सभी बराबर हैं।

हमारे मित्र आसाम के श्री सादुल्ला ने यह फरमाया है कि इस बात को व्यक्त करके कि स्थान संरक्षण की व्यवस्था अल्पसंख्यकों के हित में है या नहीं, मुसलमानों के हित में है या नहीं, इस प्रश्न पर विचार करने के लिए उन लोगों ने दिसम्बर या फरवरी में एक अपनी बैठक की थी, वह किसी रहस्य का उद्‌घाटन नहीं कर रहे हैं। मैं उनसे यह पूछता हूं कि क्या यह सुझाव मैंने दिया था कि इस पर वह लोग विचार करें? वे लोग इस पर विचार करने के लिए समवेत ही क्यों हुए, अगर उन्हें इस देश से विदेशी शासन के समाप्त हो जाने का कोई आभास नहीं मिला था? आखिर उन्होंने ऐसा सोचना क्यों शुरू किया कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था शायद उनके लिए अच्छी हो या न हो। फौरन ही उनके दिमाग में यह सब ख्यालात पैदा होने लगे। यह बातें उन लोगों के दिमाग

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

में आने लगी जो पहले देश विभाजन की मांग करते थे। आजादी का पहला फायदा तो हमें यही पहुंचा कि अब ऐसे ख्याल उन लोगों के मन में उठने लगे। अब आपका दिमाग सोचने समझने के लिए आजाद हो गया है और इसलिए आप यह महसूस करने लगे हैं कि अतीत में आप जो करते थे वैसा करना शायद अब ठीक न होगा। अल्पसंख्यक समिति के सामने यही बातें रखी गई थी। जब डाक्टर मुकर्जी ने अपना प्रस्ताव पेश किया था तो बिहार के श्री तजम्मुल हुसैन ने ही उठकर यह संशोधन रखा था कि स्थान-संरक्षण की व्यवस्था उठा देनी चाहिए। समिति में उनको इस बात की चुनौती दी गई कि वह इसका सबूत दें कि उन्होंने उसके संबंध में मुस्लिम सदस्यों से राय ले ली है। इस पर श्री तजम्मुल हुसैन ने सभी प्रांतों के प्रतिनिधियों की रायें बतानी शुरू की जिनसे उन्होंने परामर्श किया था। पर हम यह नहीं चाहते थे कि बहुमत के बल पर उस प्रस्ताव को पास करें। मैंने परामर्शदातृ समिति के सामने यह राय व्यक्त की कि इस प्रश्न को अभी स्थगित रखा जाये और इस बीच में अल्पसंख्यक वर्गों के सदस्य अपने अपने निर्वाचन क्षेत्रों में परामर्श करके यह जान लें कि वस्तुत: मतदाता वर्ग क्या चाहते हैं। फिर करीब चार महीने बाद परामर्शदातृ समिति की बैठक हुई पर दुर्भाग्य से श्री सादुल्ला साहब उपस्थित नहीं थे या वह समिति में आये नहीं और इस तरह उन्हें लोगों ने क्या रायें दी, यह जानकारी उन्हीं के पास रह गई और समिति को मालूम न हो सकी। उन्होंने फरमाया है कि उस बैठक में कुल चार ही सदस्य उपस्थित थे जिसमें मौलाना आजाद तटस्थ थे। मैं नहीं जानता कि उन्होंने मौलाना आजाद से परामर्श लिया भी था या नहीं। उनका दावा है कि मौलाना आजाद के मन को वह मुझसे भी ज्यादा जानते हैं। पर मैं उनको यह बता सकता हूं कि मौलाना आजाद चेतना शून्य नहीं हैं, वह एक चेतनाशील व्यक्ति हैं। अगर उन्होंने यह महसूस किया होता कि वह प्रस्ताव मुस्लिम समाज के हित के विरुद्ध है तो वह फौरन अपनी राय जाहिर करते। पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। क्योंकि वह समझते थे कि और महसूस करते थे कि जो भी हो रहा है वह सही है। इसलिए अगर सादुल्ला साहब उनकी चुप्पी का मतलब यह लगाते हैं कि वह तटस्थ थे तो यह उनकी भूल है क्योंकि मौलाना आजाद एक ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने सारी जिन्दगी बड़े-बड़े संकट के समय भी, मुस्लिम समाज के विरोध का मुकाबला किया और अपने विचार पर डटे रहे। उन्होंने अपना जामा नहीं बदला है। अगर वह देश विभाजन का दावा किये होते, उसके लिये काम किये होते, अगर उनका यह विश्वास रहा होता कि इस देश में दो जातियां हैं तो मुझे यकीन है कि देश विभाजन के बाद वह हर्गिज यहां न रहते। क्योंकि अगर उनका यह विश्वास होता कि मुसलमान एक भिन्न जाति के रूप में हैं तो फिर विभाजन के बाद यहां ठहरना वह गवारा ही नहीं करते।

किंतु कुछ लोग ऐसे हैं जिन्होंने देश के बंटवारे के लिए काम किया, जिन्होंने तमाम जिन्दगी यही कहा कि हिंदू और मुसलमान सर्वथा दो भिन्न कौमें हैं और फिर भी यहां जो कोई रह गई है, उसका प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हैं। मुझे आश्चर्य है कि सादुल्ला साहब अब इस देश के विशाल मुस्लिम समूह का प्रतिनिधित्व करने का दावा कर रहे हैं। वह कैसे यह दावा कर सकते हैं? मुझे तो उनके इस दावे पर आश्चर्य है।

बल्कि उनसे ज्यादा तो मैं मुसलमानों का प्रतिनिधित्व कर सकता हूं। मुसलमानों का प्रतिनिधित्व तो वह उस रास्ते पर चलकर नहीं कर सकते हैं जिस पर कि तमाम जिन्दगी वह चले हैं। उनको अपना वह पथ बदलना होगा। वह यह भी कहते हैं कि स्थान-रक्षण की व्यवस्था का उन्हें कोई आकर्षण नहीं है, आसाम के लोग उसे नहीं चाहते हैं। फिर मैं उनसे पूछता हूं कि कौन इस व्यवस्था को चाहता है? क्या भारत के मुसलमान उसे चाहते हैं? तो क्या उसी रूप में सभा इस प्रश्न पर निर्णय करने जा रही है? आप यह फरमाते हैं कि इस सभा में अगर मुस्लिम सदस्यों की या अल्पमत वालों की राय उनकी बात के खिलाफ है तो वह सभा के फैसले को मंजूर कर लेंगे। उन्होंने यहां मुसलमानों की राय देख ही ली है। अब उन्हें चाहिए कि वह अपनी राय बदल दें।

हम एक बहुत बड़ा सौदा कर रहे हैं।, हम इतिहास के क्रम को बदलने जा रहे हैं। एक बहुत बड़ा दायित्व हमारे सिर पर है और इसलिए मैं आप सबसे यह अपील करूंगा कि इस पर अपनी राय देने के पहले खूब सोच लीजिये, अपने विवेक को टटोल लीजिये और यह सोच लीजिये कि भविष्य में इस देश में क्या होने जा रहा है। इस देश का भावी स्वरूप एक स्वतंत्र देश के अनुरूप होगा और स्वरूप उससे सर्वथा भिन्न होगा जिसकी कल्पना देश विभाजन कराने वालों ने की थी। इसलिए देश विभाजन में जिन्होंने हाथ बटाया है उनसे मैं कहूंगा कि वह इस बात को खूब समझ लें कि अब समय बदल गया है, स्थिति बदल गई है और दुनिया बदल गई है और इसलिए अगर वह अपना कल्याण चाहते हैं तो वह भी, लाजिमी है कि, अपना परिवर्तन करें। अब पृथक निर्वाचन के प्रश्न पर कुछ कहना समय बर्बाद करना है।

हमारे मित्र लारी ने एक दूसरा संशोधन रखा है। उनका कहना है कि परामर्शदातृ समिति ने इस समस्या के समाधान के संबंध में जो पथ ग्रहण किया है वह सही है। मुझे खुशी है कि वह इतना स्वीकार तो करते हैं। समिति की बैठक से फायदा ही क्या अगर किसी समाधान के लिए गलत रास्ता ही पकड़ना हम तय करें। समिति ने इस प्रश्न को सर्वथा अल्पसंख्यकों की मर्जी पर छोड़ दिया था। हमारी ओर से इस संबंध में कोई पहल नहीं ली गई थी। मैंने जब अल्पसंख्यकों को संरक्षित स्थान देने की व्यवस्था का प्रस्ताव तैयार किया था तो समिति में जिसमें अल्पसंख्यक थे उन सबकी बहुसंख्यक राय लेकर ही उसे तैयार करने की कोशिश की थी। अल्पसंख्यकों की भावनाओं को मैं छेड़ना नहीं चाहता था। इस सभा का प्रतिनिधि होने के नाते मेरा सदा यही प्रयास रहा है कि व्यवस्था ऐसी हो कि जिससे अल्पसंख्यक निश्चिन्तता का अनुभव करने लगें। आज भी अगर कोई रियायत दी जा रही है तो केवल उसी उद्देश्य से दी जा रही है कि यहां छोटे से छोटे अल्पमत को भी कोई आशंका न रह जाये। क्योंकि मेरा यह ख्याल है कि असंतुष्ट अल्पसंख्यक समुदाय हमेशा एक बोझ और खतरा बना रहता है। जब तक कि वह बेकायदे न चलें, हमें कोई भी ऐसा काम नहीं करना चाहिये जिससे किसी भी अल्पमत वर्ग की भावना को चोट पहुंचे। श्री लारी का यह कहना है कि अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति हमें चलानी ही चाहिए, उसके संबंध में मैं उन्हें यह बता दूं कि यह कोई नई पद्धति नहीं है। इसका

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

प्रारम्भ हुआ था आयरलैंड में और स्वीट्जरलैंड और अन्य कुछ देशों में यह आज प्रवर्तन में है। मैं मिस्टर लारी को यह बताऊं कि आयरलैंड अपने संयुक्त प्रांत के एक जिले के बराबर भी नहीं है। गोरखपुर का जिला ही आयरलैंड से बड़ा है। हमारा देश एक बहुत ही विशाल देश हैं जहां एक विस्तृत जन समूह आबाद है। हमने इस देश में, जहां इतनी अशिक्षा है, प्रौढ़ मताधिकार चालू किया है। यहां तो प्रत्यक्ष मतदान की जो सीधी पद्धति है वही काफी भयावह प्रतीत होती है। ऐसी हालत में अनुपाती प्रतिनिधान की जटिल व्यवस्था चलाना यहां के लिए आसान नहीं होगा। अपने विधान में इस तरह की जटिल व्यवस्थाओं को स्थान देना बड़ा खतरनाक होगा। इसलिए मैं उनसे यही कहूंगा कि उनकी समझ में स्थान-रक्षण की व्यवस्था अगर खराब है तो फिर प्रकारान्तर से उस व्यवस्था को यहां लाने की कोशिश न करनी चाहिये। जो व्यवस्था हमने की है उसे ज्यों का त्यों रहने दीजिये और देखिये कि होता क्या है? एक महीना हुआ अहमदाबाद के म्युनिसिपल चुनाव में मैंने देखा कि सभी मुसलमान मिलकर संयुक्त निर्वाचन पद्धति के अनुसार चुनाव लड़े और उनके सभी उम्मीदवार सफल रहे, जो कि उनके खिलाफ ऐसे लोग खड़े थे जिनके लिए मुस्लिम लीग ने पूरा खर्च किया था। उस निर्वाचन में हरिजनों को अपने नियत कोटा से भी एक स्थान ज्यादा मिल गया था। आजादाना तौर पर किये जाने वाले चुनावों ने यह साबित कर दिया है कि स्थान-रक्षण की या अन्य किसी व्यवस्था के द्वारा प्रगति में रुकावट डालना हमारे लिए बहुत बुरा है। अगर हम इस प्रश्न को बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक वर्गों पर छोड़ देते हैं कि वह आपस में इसका एक फैसला तय कर लें तो हम सबके लिए यह एक गौरव की बात होगी। आखिर आपको इसमें डर क्या है? कल ही तो आप यह कह रहे थे कि आपका अल्पमत समुदाय एक सुसंगठित और एक मजबूत अल्पमत है। ऐसी सूरत में आप डरते क्यों हैं? दूसरों को अपना दोस्त बनाइये और वातावरण में परिवर्तन पैदा कीजिये। ऐसा करने से आप अपने अंश से अधिक जगहें पायेंगे। अगर देश के लिए आपकी भावनायें वैसी ही हैं जैसी कि अन्य लोगों की तो अवश्य आपको चुनाव में जगहें मिलेंगी। जहां तक मुमलमानों की बात का संबंध है मेरा ख्याल है कि सभी बातों का जवाब मैंने दे दिया है। मुस्लिम समाज के बहुतेरे योग्य प्रतिनिधियों ने अपने अन्य प्रतिनिधियों के दावों के खोखलापन पर काफी रोशनी डाल दी है, इसलिये इस पर और कुछ कहने की जरूरत नहीं है।

अब सवाल आता है सिखों का। सिख सम्प्रदाय के लिए मेरे मन में सदा यथेष्ट आदर, सम्मान और प्रशंसा का भाव रहा है। मैं हमेशा उनका मित्र रहा हूं जोकि कभी-कभी उन्होंने इसका खंडन किया है कि मैं उनका मित्र हूं। इस मौके पर भी मैंने उनको समझाया कि अगर अपने लिए संरक्षित जगहें रखने पर आग्रह करते हैं तो उनके लिये इसकी व्यवस्था कर दूंगा और समिति को इसे मानने पर राजी करूंगा। किन्तु मैं यह महसूस करता हूं कि यह व्यवस्था उनके हित में अच्छी नहीं है। इसके संबंध में जो चाहे फैसला कर लें। यह बात मैं उन्हीं पर छोड़ देता हूं। अनुसूचित जाति के सिखों के लिए यह रियायत सिख मांगें, यह उनके लिए गौरव की बात नहीं है। उन्होंने इस प्रसंग में रणजीत सिंह का कथन उद्धृत किया है जिन्होंने ऐसी मदद अनुसूचित जातियों को दी थी। आखिर इन अनुसूचित जाति वालों का कब राज्य रहा है? ये बेचारे तो सदा ही पीसे गये हैं, हमेशा

नीचे रहे हैं और बिल्कुल धूल की हैसियत इनकी रही है। हमारी लम्बी चौड़ी बातों के बावजूद भी उनकी आज क्या हालत है? उनमें चन्द लोग ऐसे हो सकते हैं जो साहस सम्पन्न हों। दिलेर हों। उनकी दस हजार की आबादी तीन दिनों के अन्दर ईसाई बन गई। बीदर में जाकर आप उनकी दशा देखें। क्या इसे आप धर्म परिवर्तन कहेंगे? हर्गिज नहीं। उन्हें इस बात का डर था कि रजाकारों के अपराधों में उन्होंने जो साथ दिया था उसके लिए वे पकड़ लिये जायेंगे। उन्होंने कुछ अपराध किये भी थे। उन्होंने यह सोचा कि विशाल मुस्लिम जनसमूह उनके पकड़े जाने की मुखालिफत करेगा, उनका साथ देगा। इस बार धर्म परिवर्तन की घटना हुई अनुसूचित जातियों में। पर धर्म परिवर्तन की बात के अलावा भी, मैं आपसे यह पूछता हूं कि क्या कभी मेहतरों की बस्ती में जाकर वहां उनके घरों में एकाध घंटा ठहरे हैं? क्या उनके पास कोई भी ऐसा स्थान है जिसको अपना घर या वतन कह सकें? मि. नागप्पा जरूर कहते हैं ''हिन्दुस्तान हमारा घर है'' यह बहुत खुशी की बात है और हमें उनके मनोभाव पर गौरव है। पर गरीब लोगों को निरंतर सताया जा रहा है और आज भी उनको रक्षण नहीं मिल रहा है। हम उनके ट्रस्टी है। पूना के समझौते में हमने एक प्रतिज्ञा की है। क्या हमने उसे पूरा कर लिया? हमको यह स्वीकार करना ही होगा कि हम दोषी हैं। आपकी जानकारी के लिए मैं आपको यह भी बता दूं कि देश के दूसरे भागों में धर्म परिवर्तन करने वालों में हजारों ऐसे हैं जो आज पुनः अपने धर्म में आना चाहते हैं पर उनको ऐसा करने नहीं दिया जा रहा है। वे अपने धर्म में पुनः वापिस आ नहीं पाते हैं और दुर्भाग्य से, हम उनकी सहायता करने में भी असमर्थ हैं। यह तो है उनकी अवस्था। वे कृपाण धारण करने वाले लोग नहीं हैं। उनका एक भिन्न ही वर्ग है। पर कृपाण और तलवार धारण करके भी भयभीत रहना यह असंगत बात है। स्थान-रक्षण की व्यवस्था आपके आदर्श पर अहितकर प्रभाव डाल सकती है। मुझे आपको यह रियायत देने पर कोई विरोध नहीं है। मैं तो आप लोगों से—सिखों से—यह कहूंगा कि देश का नियंत्रण अपने हाथ में लीजिये और इसका शासन चलाइये। वे शासन चलाने में समर्थ हो सकते हैं क्योंकि उनके पास क्षमता है, साधन है और साहस है। कृषि में, इंजिनीयरिंग में, सेना में, हर क्षेत्र में आपने अपनी योग्यता साबित कर दिखाई है। आप अपने को क्यों ऐसा हीन समझने लगे हैं? इस हीन भाव को दूर करने के ख्याल से ही तो मैं अनुसूचित जातियों को यह कह रहा हूं कि वह भूल जायें कि वे अनुसूचित जाति के हैं। मैं जानता हूं, यह भूलना उनके लिए मुश्किल है पर सिखों के लिए यह मुश्किल नहीं है। मैं आपका कृतज्ञ हूं कि इस दी हुई रियायत के लिए आप हमारे प्रति कृतज्ञता ज्ञापन कर रहे हैं इस देश में अब हम चाहते हैं शांति और ऐक्य का वातावरण, अविश्वास और सन्देह का नहीं। हम अपना विकास करना चाहते हैं। हिंदुस्तान में खून की कमी है, आज यह बिल्कुल ही दुर्बल हो गया है। जब तक आप इसकी नसों में खून नहीं देंगे, स्थान-रक्षण पर झगड़ कर हम कुछ भी न हासिल कर सकेंगे। ठोस बुनियाद पर हमें अपने देश को खड़ा करना होगा। जैसा कि मैंने अभी आपसे कहा है, जब मुझे इस समिति का सभापति बनाया गया था तो मैं कांप रहा था पर मैंने गौरव बोध जरूर किया था और आज भी मुझे गौरव बोध हो रहा है और मुझे आशा है कि सभा भी इस बात पर गर्व अनुभव करती होगी कि अपने अतीत की कालिमा को विधान से हटाने में हम सब प्रायः एक मत हो गये हैं (*हर्ष ध्वनि*) और ईश्वर की कृपा से, उसके

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

आर्शीवाद से एक सच्चे असाम्प्रदायिक और लोकतंत्रीय राज्य की बुनियाद रखने में समर्थ हो गये हैं, जहां प्रत्येक नागरिक बराबर का मौका पा सकेगा। परमात्मा हमें बुद्धि दे, साहस दे कि हम सभी लोगों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करें।

***अध्यक्ष:** अब मैं एक-एक करके सभी संशोधनों पर राय लूंगा। पहला संशोधन है श्री मुहम्मद इस्माइल का। प्रस्ताव यह है कि:

> ''(क) प्रस्ताव की दूसरी कंडिका की उप कंडिका (1) हटा दी जाये और उपकंडिका (2) का संख्याक्रम बदलकर उसे उप कंडिका (1) कर दिया जाये।
>
> (ख) इस पर कंडिका (1) के बाद निम्नलिखित उप कंडिका जोड़ दी जाये।
>
> (2) मुसलमानों और अन्य अल्पसख्यंकों के लिए आबादी के आधार पर देश की केन्द्रीय एवं प्रांतीय विधान-मंडलों में स्थानों को संरक्षित रखने का जो सिद्धांत है उसकी पुष्टि की जाये और रखा जाये।
>
> (3) इस सभा द्वारा इस संबंध में जो कोई भी निर्णय किया जा चुका हो उसके बावजूद भी विधान के मसौदे के भाग 14 के तथा इससे मिलते जुलते अन्य अनुच्छेदों के प्रावधानों में इस तरह संशोधन कर दिया जाये कि यह बात सुनिश्चित हो जाये कि उपखंड (1) के अनुसार संरक्षित रखे गये स्थान अल्पसंख्यकों के मतदाताओं के निर्वाचन क्षेत्रों से चुने गये उन संप्रदायों के सदस्यों द्वारा ही सदा पूर्ण किये जायेंगे।''

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं श्री लारी के एक-एक पैरे पर अलग-अलग मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

> ''प्रस्ताव की दूसरी कंडिका की उपकंडिका (1) में ''the provisions of'' शब्दों के बाद ''article 67'' शब्द जोड़ दिये जायें।''

संशोधन नामंजूर रहा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

> ''प्रस्ताव की दूसरी कंडिका की उपकंडिका (1) में 'in the said report' (उक्त रिपोर्ट में) शब्दों के बाद 'with the addition that elections be held under the system of cumulative votes in multiple constituencies and the modification that no seats be reserved for the Scheduled Castes'

(उस परिवर्तन के साथ कि अनेक सदस्यात्मक निर्वाचन क्षेत्रों में चुनाव सामूहिक मतदान की पद्धति के अनुसार होंगे और इस संशोधन के साथ कि अनुसूचित जातियों के लिए कोई संरक्षित स्थान न रखे जायेंगे) शब्द जोड़ दिये जायें।''

संशोधन नामंजूर रहा।

***अध्यक्ष:** इसके बाद आता है वह संशोधन जिसे पं. ठाकुरदास भार्गव ने पेश किया है।

***पं. बालकृष्ण शर्मा:** (संयुक्तप्रांत : जनरल): मैं समझता हूं प्रस्तावक महोदय, उनके संशोधन को स्वीकार कर रहे हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल:** हां, मैं इस संशोधन को स्वीकार करता हूं।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव है कि:

> ''निम्नलिखित अंश प्रस्ताव में जोड़ दिया जाये:
>
> '1. स्थानों को संरक्षित रखने के और मनोनीतकरण के प्रावधान इस संविधान के प्रारम्भण से दस वर्ष की अवधि तक ही चालू रहेंगे।' ''

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है कि:

> 'पं. ठाकुरदास भार्गव के संशोधन द्वारा, जो कि स्वीकृत हो चुका है, संशोधित रूप में मूल प्रस्ताव स्वीकार किया जाये।''

प्रस्ताव संशोधित रूप में स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब सभा कल प्रात: 8 बजे तक के लिए स्थगित होती है।

इसके बाद विधान-परिषद् शुक्रवार ता. 27 मई सन् 1949 के प्रात: 8 बजे तक के लिए स्थगित हुई।
